कमलमणि-ग्रन्थ माला—१

ब्र० गोपालचन्द्र उपनाम गिरिधरदास कृत

जरासंधवध महाकाव्य

पूर्वार्द्ध

सम्पादक—

ब्रजरत्न दास बी० ए०

प्रकाशक—

कमलमणि-ग्रन्थमाला-कार्यालय,

काशी।

प्रथम संस्करण] —— [मू० १)

विषय-सूची

अनुवचन

हिंदी साहित्य में वीर रसात्मक काव्यों की कमी है और इसलिए जो प्राप्त हैं उन्हें बड़े यत्न से रखना ही हमलोगों का कर्तव्य है। हिंदी के कुछ दिग्गज विद्वान साहित्य के श्रृंगारात्मक कविताओं को अश्लील समझकर उन्हें गंभीर समुद्र में डुबो देने का प्रस्ताव करते हैं पर वीररस के काव्यों की रक्षा में वे कहाँ तक प्रयत्नशील हैं यह वेही बतला सकते हैं। जरासंध-वध महाकाव्य वीर रसपूर्ण है पर इसका प्रथम संस्करण कवि के पुत्र भारतेन्दुजी द्वारा लीथोमें पचास वर्ष पहिले सं० १९३१ तथा ३२ में प्रकाशित हुआ था पर अब तक इसके दूसरे संस्करण के होने की पारी नहीं आई, यही वीररसात्मक काव्यों के प्रेमियों की सतत प्रयत्नशीलता का फल है।

यह महाकाव्य अपूर्ण है और इसके पूर्ण करने का जो प्रयत्न किया गया था उसका उल्लेख ग्रंथपरिचय में किया गया है। इसका केवल दस सर्ग पूरा और ग्यारहवें सर्ग का कुछ अंश मिला है। अंतिम सर्ग पूरा कर मूलग्रंथ का पूर्वार्द्ध प्रकाशित किया जाता है। कितना अंश मेरा है उसे बतलाने की कोई आवश्यकता नहीं उसका भद्दापन आपही उसे प्रगट कर देगा। हाँ, मुझे आशा है कि कोई सहृदय कवि इस ग्रंथ का उत्तरार्द्ध लिखकर इसे पूर्ण कर हिंदी जगत को अनुगृहीत करेगा।

कुछ दिन हुए कि मुझे सं० १९३१ तथा ३२ की प्रकाशित जरासंधवध की एक प्रति मिली जो पढ़ने पर मुझे ऐसी भाई कि मैंने उसे संपादित कर प्रकाशित करने का निश्चय कर लिया। अनेक बाधाओं के रहते भी लगभग एक वर्ष में यह कार्य

समाप्त हो गया। इस संस्करण में कुछ अनेकार्थक शब्दों के अर्थ फुट नोट में दे दिए गए हैं। पाठ भी कहीं कहीं ठीक किया गया है। इसकी हस्तलिखित प्रति के लिए भारतेंदुजी के पुस्तकालय की छान बीन की गई पर उसके अव्यवस्थित रूपमें रहने के कारण कुछ पता न लगा। विचार था कि इस ग्रंथ की भूमिका में बा० गोपालचन्द्र तथा उनके पूर्वजा की विस्तृत जीवनी दी जाय पर नई नई बातों का पता लगते रहने और इस ग्रंथ की भूमिका के बहुत बढ़ जाने के डर से वैसा नहीं किया गया। इन सब सामग्रियों का तथा जो नई समग्री प्राप्त होगी उसका उपयोग भारतेंदुजी की जीवनी में किया जायगा जिसको लिखने का विचार है। इन सब सामग्रियों के प्राप्त करने में मुझे कई सज्जनों से सहायता मिल रही है जिनका उल्लेख उसी ग्रंथ में किया जायगा पर इस ग्रंथ में भी अपने परम मित्र पं० केदारनाथ पाठक के प्रति कृतज्ञता प्रगट करना, जो इन सामग्रियों के प्राप्त करने के प्रधान साधन हैं, उचित है।

अस्तु, यह ग्रंथ इस रूप में हिंदी-प्रेमियों के सम्मुख उपस्थित किया जाता है। आशा है कि वे इसे अपनाकर मेरे परिश्रम को सफल करेंगे।

श्रावण पूर्णिमा
सं० १९८३

विनीत—
व्रजरत्नदास

जरासंधवध महाकाव्य

महाकवि बा० गोपालचन्द्र
उपनाम गिरिधरदास

कवि-परिचय

हिंदी के सुप्रसिद्ध महाकवि बा० गोपालचंद्र, उपनाम बा० गिरिधरदासजी के पुत्र आधुनिक हिंदी के जन्मदाता, हिंदी-प्रेमियों के प्रेमाराध्य तथा पं० प्रतापनारायणजी मिश्रके कथनानुसार प्रातःस्मरणीय गोलोकवासी भारतेंदु बा० हरिश्चन्द्रजी ने निज उत्तरार्द्ध भक्तमाल में अपने वंश का परिचय निम्नलिखित दोहों में दिया हैं—

वैश्य-अग्र-कुल में प्रगट बालकृष्ण कुलपाल।
ता सुत गिरधर-चरन-रत वर गिरिधारीलाल॥
अमीचंद तिनके तनय, फतेचंद ता नंद।
हरषचंद जिनके भए निज-कुल-सागर-चंद॥
श्रीगिरिधर गुरु सेइके, घर सेवा पधराई।
तारे निज कुल-जीव सब हरि-पद भक्ति दृढ़ाइ॥
तिनके सुत गोपाल ससि, प्रगटित गिरधरदास।
कठिन करमगति मेटि जिन, कीनो भक्ति प्रकास॥
मेटि देव देवी सकल, छोड़ि कठिन कुल-रीति।
थाप्यो गृह में प्रेम जिन प्रगटि कृष्ण-पद-प्रीति॥
पारवती की कोख सों, तिनसों प्रगट अमंद।
गोकुलचंद्राग्रज भयो भक्त-दास हरिचंद॥

पूर्वोक्त उद्धरण से यह ज्ञात हो जाता है कि इनके पूर्वजों में राय बालकृष्ण तक का ही ठीक ठीक पता चलता है। सेठ बालकृष्ण के पूर्वजों का दिल्ली के मुग़ल-सम्राट् वंश से विशेष संबंध था पर उस शाही घराने के इतिहासों में इस वंश का कोई उल्लेख मुझे अभी तक नहीं मिला। जिस समय शाहजहाँ का

द्वितीय पुत्र सुलतान शुजा बंगाल का सूबेदार नियुक्त होकर बंगाल प्रांत की राजधानी राजमहल को आया था उस समय इनका वंश भी उसीके साथ बंगाल चला आया। जब बंगाल के नवाबों की राजधानी राजमहल से उठकर मुर्शिदाबाद को चली गई तब यह वंश भी मुर्शिदाबाद में आ बसा। इन दोनों स्थानों में इनके पूर्वजों के विशाल महलों के खंडहर अब तक वर्तमान हैं।

मुर्शिदाबाद में इस वंश की कई पीढ़ियों ने बड़े सुख से दिन व्यतीत किए थे। सेठ बालकृष्ण के पौत्र तथा गिरधारी-लाल के पुत्र सेठ अमीन*चंद के समय में बंगाल में

---

* अंग्रेज़ी इतिहासों में ओमीचंद तथा हंटर के इतिहास में उमाचरण नाम दिया गया है। फ़ारसी के इतिहासों में अमीनचंद नाम पाया जाता है। कहीं कहीं पुराने ग्रन्थों में अमीर चंद नाम भी मिलता है। उस घराने के कागज़ात में अमीनचंद ही लिखा है। इनके पुत्र बा० फतहचंदने काशी आकर चौखंभे वाला मकान क्रय किया था जिसके बैनामें में, जो ३ शाबान १२०३ हि० (सन् १७८९ ई०) को लिखागया था, फतहचंद्र वल्द अमीनचंद बिन गिरिधारीलाल लिखा हुआ है। एक दूसरे कागज़ में फारसी अंश में अमीनचंद और उसीकी हिंदी प्रतिलिपि में, दोनों एकही कागज़ पर हैं, अमीचंद लिखा है। अमीनचन्द के दो पुत्रों का नाम फतेहचन्द और हुकुमचन्द है जिससे यह स्पष्ट है कि नाम में फारसी शब्दों का प्रयोग उस समय से होने लगा था। ज्ञात होता है कि नवाब दरबार से अधिक संबंध होने के कारण फारसी शब्द 'अमीन', जो सेठों के लिए बहुत उपयुक्त है, नाम में लाया गया है. और उच्चारण अमीं सा करने तथा लिखते २ चन्द्रबिंदु के लुप्त होजाने से अमीचन्द रह गया है। फारसी में चन्द्रबिंदु के न होने से पूरे वर्ण 'नूँ' का प्रयोग होता है। निखिलनाथ रायकी मुर्शिदाबाद काहिनी के ६७ पृ० पर भी अमीन चन्द ही दिया है।

अंग्रेजों का प्रभुत्व स्थापित हो गया था और उस प्रांत के राजत्व-काल का प्रारंभ हो चला था। यह भी अंग्रेजों के एक प्रधान सहायक थे और लगभग चालीस वर्ष से कलकत्ते में व्यापार कर रहे थे। आरंभ में निज व्यापार को फैलाने में अंग्रेजों ने इनसे बहुत सहायता ली थी पर उसके जम जानेपर उन्होंने इनपर दोष लगाकर इन्हें अलग कर दिया। इसी समय बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला ने कलकत्ते पर चढ़ाई कर उसे लूट लिया और अमीनचंद का भी चार लाख रुपया नगद और सामन लुट गया। इनके घर द्वार जला दिए गए और इनके परिवार की कई स्त्रियां और पुरुष जलकर मर गए। अंग्रेजों ने अन्य प्रांतों से सहायता प्राप्त कर पलासी युद्ध में नवाब को परास्त कर गद्दी से उतार दिया और उनके स्थान पर मीरजाफर को बैठाया। इस षड्यंत्र में अमीनचंद भी सम्मिलित थे पर उसके सफल होने पर पुरस्कार बँटने के समय इनका नाम तक न लिया गया जिससे इन्हें इतना क्षोभ हुआ कि इस घटना के डेढ़ ही वर्ष के उपरान्त उनकी मृत्यु हो गई।

सेठ अमीनचंद के पुत्र बा० फ़तेहचंद इस घटना से अत्यंत विरक्त होकर सं० १८१६ के लगभग काशी चले आए। काशी के प्रसिद्ध नगरसेठ बा० गोकुलचंदजी की कन्या से आपका विवाह हुआ। उन्हें कोई अन्य संतान नहीं थी इससे येही उनके उत्तराधिकारी हुए। तत्कालीन सरकार में भी आपका बहुत सम्मान था और इनकी प्रशस्ति–बा० फतेहचंद्र साहू–बाबू साहेब मेहबान दोस्तान सलामत–ख़ातमः–काग़ज़ अफ़शाँ (चमकता हुआ) मुह्रखुर्द (मुहर छोटी) थी। 'दवामी बंदोबस्त' के समय इन्होंने डंकन साहेब की बहुत सहायता की थी जिसके लिए उन्होंने इन्हें धन्यवाद दिया था। इनके बड़े भाई राय रात्नचन्द्र बहादुर भी इनके आने के बाद काशी

चले आए और राजसी ठाट के साथ रामकटोरे वाले बाग़ में रहने लगे। इनके पुत्र रायचंद्र तथा पौत्र गोपीचंद्र की मृत्यु इन्हीं के सामने हो गई थी इससे फतेहचंद्र के पुत्र बा० हर्षचंद्र ही इनके भी उत्तराधिकारी हुए। बा० फतेहचंद्र की मृत्यु सं० १८६७ के लगभग हुई।

बाबू हर्षचन्द्र काशी में काले हर्षचंद्र के नाम से प्रसिद्ध थे और इनका जनता तथा सरकार में बड़ा मान था। सं १८९९. में पंसेरी के लिए जब गड़बड़ हुआ था तब बनारस के कमिश्नर गब्बिन्स साहब ने इन्हें सरपंच और बा० जानकीदास तथा बाबू हरीदास को पंच माना था। पंचायत में त्रिलोचन की पंसेरी ठीक मानी गई जिसपर काशीवासियों ने इन लोगों की सवारी बड़े धूमधाम से निकाली थी। काशी का बुढ़वा-मंगल मेला बहुत प्रसिद्ध है। इसका आरंभ भी इन्हींने किया था। पहले लोग वर्ष के अंतिम मंगल को नाव से दुर्गाजी का दर्शन करने अस्सी तक जाते थे। इन नावों पर नाच भी होने लगा तब काशीराज ने बाबू हर्षचंद्र के परामर्श से बुढ़वा-मंगल को वर्तमानरूप दिया था। ये बड़े समारोह के साथ कच्छा पाटते थे और बिरादरी के लोगों की जेवनार भी करते थे। ये काशी-नरेश के महाजन थे और इनका उस दरबार में बहुत सन्मान था। बिरादरी में भी इनका इतना मान था कि अनेक धनाढ्यों तथा प्रतिष्ठित व्यक्तियोंके रहते भी इन्हें ही अपना चौधरी बनाया। ये स्वामी गिरिधरजीके शिष्य थे। जिस समय श्रीगिरिधरजी श्रीमुकुंदराय को काशी लाए उस समय बारात आदि का सब प्रबंध इन्हींने किया था। इन्होंने अपने घर में भी श्रीमदनमोहनजी की सेवा पधराई और इस मनोहर युगल मूर्तिकी सेवा इस वंश में बड़े प्रेम से अब तक होती आ रही है। बाबू हरिश्चंद्र तथा बाबू गोकुलचंद्रजी में जिस समय

हिस्सा हुआ था उस समय ठाकुरजीके व्यय के लिए बाग, मकान, एक गाँव तथा पचास सहस्र रुपया अलग कर दिया गया था। सन् १८३४ ई० में सरकार की ओर से व्यापार की अवस्था तथा सोना चांदी की बिक्री में कमी होने का कारण महाजनों से पूछा गया था जिसका उत्तर बा० हर्षचंद्र ने बड़ी योग्यता के साथ दिया था। इन्हें दो कन्याएँ हुई थीं पर पुत्र एक भी नहीं हुए थे और अवस्था भी अधिक हो चली थी। एक दिन यह श्रीगिरिधरजी के पास उदास मुख बैठे हुए थे। इनकी उदासी का कारण पूछे जाने पर लोगों ने वही कारण बतला दिया। महाराज ने कहा कि 'तुम जी छोटा न करो। इसी वर्ष पुत्र होगा'। उसी वर्ष पौष कृष्ण १५ संवत् १८९० को महाकवि बा० गोपालचंद्र का जन्म हुआ। श्रीगिरिधरजी कीकृपा से जन्म लेने के कारण इन्होंने कविता में अपना उपनाम गिरिधरदास रखा था। बा० हर्षचंद्र सं० १९०१ में परलोक सिधारे।

पिता की मृत्यु के समय बा० गोपालचंद्र की अवस्था ग्यारह वर्ष की थी जिससे वसीयतनामे के अनुसार बिज्जीलाल सब प्रबन्ध करते थे। इस प्रबंध से बहुत क्षति हो रही थी तथा बहुत होती पर इन्होंने तेरह वर्ष की अवस्था ही में कुल प्रबंध अपने हाथ ले लिया। इनका विवाह दिल्ली के शाहजादों के दीवान राय खिरोधरलाल की कन्या पार्वती देवी से सं०१९०० में हुआ था। इनके वंश में फ़ारसी के अच्छे अच्छे विद्वान हुए थे। इनको भी एक ही कन्या थी जिससे विवाह बड़े धूम धाम के साथ हुआ था। इस विवाहसे इन्हें चार सन्तान हुईं— मुकुंदी बीबी, भारतेंदु बा० हरिश्चंद्र, बा० गोकुलचंद्र और गोविंदी बीबी। प्रथम स्त्री की मृत्यु हो जाने पर इनका दूसरा विवाह सं०१९१४ में बा० रामनारायण की कन्या मोहन

बीबी से हुआ। यद्यपि इनसे दो संतानें हुई पर दोनों ही बहुत थोड़ी अवस्था में मर गईं।

अपने पिता के एक ही पुत्र होने के कारण इनका लालन पालन बड़े चाव के साथ हुआ था और इनके बाल्यावस्थाही में वे स्वर्ग भी सिधार गए थे इससे इनकी शिक्षा विशेष रूप से नहीं हुई थी पर प्रतिभापूर्ण होने से संस्कृत तथा हिंदी के ऐसे कवि तथा विद्वान हुए कि बड़े बड़े पंडित भी इनका सन्मान करते थे। चरित्र अत्यंत निर्मल था यहाँ तक कि गर्विस साहब इन्हें 'परकटा फरिश्ता' कहते थे। विद्याध्ययन तथा पुस्तक-संचयन की इन्हें बड़ी रुचि थी। इनका बृहत सरस्वती-भवन अलभ्य तथा अमूल्य ग्रंथों का भंडार था जिसका मूल्य सुप्रसिद्ध विद्वान स्वर्गीय डा० राजेन्द्रलाल मित्र एक लाख रुपया दिलवाते थे। आश्विन शुक्ल ७ से तीन दिन तक सरस्वती शयन का उत्सव बड़े उत्साह से मनाते थे। रामकटोरे के बाग के सामने के तालाब का इन्होंने जीर्णोद्धार कराया था। भगवत्सेवा या कविता के अतिरिक्त इन्हें कोई भी व्यसन नहीं था। सबेरे और संध्या को कविता तो बनाते थे पर अधिक रचना रात्रि ही में होती थी। यह हँसमुख तथा हँसोड़ स्वभाव के थे। एकादशी व्रत आदि नियम से करते थे।

कवियों का यह बहुत आदर करते थे। दो तीन कवियों की कविता यहाँ दी जाती है। 'स्तुतिप्रकाशिका' नामक टीका ग्रंथ में सरदार कवि कहते हैं—

बिमल बुद्धि कुल बैस बनारस बास सुहावन।
फतेचंद आनंदकंद जस चंद बढ़ावन॥
हरषचंद ता नंद मंद बैरी मुख कीने।
ता सुत श्रीगोपालचंद कविता रस भीने॥
दश कथा अमृत बलराम मैं अस्तुति उहि भूषित दियो।

तेहि देखि सुबुध सरदार कवि बुधि समान टीको कियो ॥
पंडित हरिचरणजी अपने संस्कृत पत्र में लिखते हैं--

यशोदा गर्भजे देवि चतुर्वर्ग फलप्रदे ।
श्रीमद्गोपालचंद्राख्यश्चिरायुष्क्रिय तान्त्वया ॥

इनके सभासदों में पंडित ईश्वरदासजी [ईश्वर कवि], गोस्वामी दीनदयालगिरि, पं० लक्ष्मीशंकरदासजी व्यास आदि थे। साधु महात्माओंसे भी इनसे बड़ा प्रेम था। राधिकादास, रामकिंकरदासजी, तुलारामजी, भागवतदासजी उस समय के प्रसिद्ध महात्मा थे जिनसे ये भगवत्संबंधी चर्चा किया करते थे। अपने पिता के आरंभ किए हुए बुढ़वामंगल को यह भी उसी प्रकार समारोह के साथ कराते थे। एक वर्ष एक दुर्घटना हो गई। यह एक कटरमें संध्या कर रहे थे और ऊपर छत पर अनेक सज्जन बैठे हुए थे। जब ये ऊपर आए तो सभी प्रतिष्ठार्थ उठ खड़े हुए। इस हलचल में एकाएक नाव उलट गई। पर ईश्वर की कृपा से सभी कोई बचकर निकल आए। उसी अवस्था में एक पद बनाया जिसका अंतिम पद यह है—

गिरिधरदास उबारि दिखायो भवसागर को नमूना।

इन्हें अपने घर के श्रीठाकुरजी की सेवा पर बचपन ही से ऐसा अनुराग हो गया था कि वे कहीं यात्रा पर नहीं जाते थे। एकबार पितृऋण चुकाने को गयाजी गये थे जहाँ पंद्रह दिन लगाने का विचार था पर वहाँ पहुँचने पर सेवा का स्मरण कर उन्हें इतना कष्ट होने लगा कि अंत में तीन ही दिन की गया कर लौट आए। मृत्यु के समय भी घर का और कुछ सोच न कर ठाकुरजी के सामने साँस भरकर केवल इतना ही कहा था कि 'दादा तुम्हें बड़ा कष्ट होगा।'

इन्हें बचपन ही से भाँग का दुर्व्यसन लग गया था और वे इतनी गाढ़ी भाँग पीते थे कि जिसमें सींक खड़ी हो जाती थी।

अंत में इसी कारण इन्हें जलोदर रोग हो गया जिससे अनेक प्रकार की चिकित्सा होने पर भी कुछ फल न निकला और वे सं० १९१७ की वैशाख सु० ७ को गोलोक सिधारे। अंतिम समय अपने दोनों पुत्रों को बुलाकर देखा था। कोठी की ताली और प्रबंध राय नृसिंहदास को सौंप गए थे जिसे बा० गोकुलचंद्र की नाबालगी तक इन्होंने अच्छी तरह सँभाला था।

पूज्यपाद भारतेंदुजी के निम्नलिखित दोहे से इतना पता लगता है कि इन्होंने चालीस ग्रन्थ लिखे थे परंतु उन सबके नाम या अस्तित्व का अब पता नहीं चलता। दोहा यों है—

जिन श्रीगिरिधरदास कवि रचे ग्रन्थ चालीस।
ता सुत श्रीहरिचंद को को न नवावे सीस॥

इनके अक्षर सुंदर नहीं होते थे इससे वे अपने ग्रंथों की कापियाँ सुंदर अक्षरों में तैयार कराते थे और उन्हें चित्रों से सजवाते थे। इसका फल यह होता था कि रफ कापी अस्त व्यस्त हो जाती थी और ये कापियाँ पुस्तक प्रेमियों की शिकार होती थीं। अस्तु जिन पुस्तकों को मैंने देखा है उनका नाम कुछ विवरण सहित देकर अन्य पुस्तकों का उल्लेख मात्र कर दिया जायगा।

१—जरासंधबध महाकाव्य-इसके विषय में आगे लिखा जाएगा।

२—भारतीभूषण-अलंकार का यह अत्युत्तम ग्रंथ है। ३७८ दोहे हैं। एक दोहे में लक्षण देकर दूसरे में उदाहरण दिया गया है।

३—भाषा व्याकरण-छंद-विषयक कुछ नियमों का पद्य ही में विचार किया है। इसमें १२५ छंद हैं।

४—रस रत्नाकर-इसमें हाव भावादि का वर्णन है। यह अपूर्ण है और भारतेंदुजी ने इसे पूर्ण करने के विचार से हरिश्चन्द्र-मैगजीन में निकालना आरंभ किया था।

५—ग्रीष्मवर्णन-भारतेंदुजी ने स्वरचित भूमिका सहित हरिश्चंद्र मैगज़ीन के भाग १ संख्या ८ में प्रकाशित किया है। ग्रीष्म ऋतु का वर्णन है।

६—मत्स्यकथामृत-मत्स्यावतार की कथा ५१ पद में कही गई है। १९१६ की यह रचना है।

७—कच्छपकथामृत-४२५ पदों में कही गई। सं० १९०८ में यह ग्रंथ समाप्त हुआ।

८—वाराहकथामृत-१०१ छंदों में वाराह जी की कथा कही गई है।

९—नृसिंहकथामृत-इसमें नृसिंह जी की कथा है। १०५ पद हैं।

१०-वामनकथामृत-८०१ पदों में वामन जी की कथा विस्तार से कही गई है। यह सं० १९०६ में समाप्त हुआ था।

११-परशुरामकथामृत-१०१ पदों में परशुरामजी की कथा है। यह भी १९०६ की रचना है।

१२-रामकथामृत-इसमें १००१ पद हैं। रामजन्म से लेकर अश्वमेधयज्ञ तक की कथा का वर्णन है। पूर्वोक्त सातों "अवतार कथामृत" के नाम से छप चुका है।

१३-बलरामकथामृत-यह एक विशद ग्रंथ है जिसमें ४७०१ पद हैं।इसमें कृष्णचरित्र विस्तार से दिया गया है।महाभारत कथा भी संक्षेप में दी हुई है। विदुरनीति,उद्धव-ज्ञान आदि अति उत्तम प्रसंग हैं। यह ग्रंथ सं० १९०६ से १९०८ के बीच में बना है। यह भाषा का एक पुराण ही हो गया है।

१४-बुद्धकथामृत-२५ पदों की यह छोटी सी पुस्तिका है।

१५-कल्किकथामृत-यह भी २५ ही पदों में है। यह सब कथामृत मिलाकर दशावतार कथामृत होता है।

१६-नहुष नाटक-हिंदी का पहिला नाटक है। यह अपूर्ण है।

१७–गर्गसंहिता–रामयण की चाल पर दोहे चौपाई में कृष्ण-कथा कही गई। इसमें ४७८ पृष्ठ हैं और प्रति पृष्ठ में २४ पंक्तियां हैं।

१८–एकादशीमाहात्म्य–छब्बीसों एकादशी का माहात्म्य वर्णित है।

जिन अठारह पुस्तकों को मैंने स्वयं देखा था उनका नाम विवरण सहित दिया जा चुका। इन्हें छोड़कर निम्नलिखित पुस्तकों का नाम भारतेंदुजी के याददाश्त या बा० राधाकृष्ण दासजी के लेख के अनुसार लिख दिया जाता है।

(१) वाल्मीकीय रामायण (सातोकांड का पद्यानुवाद) (२) छंदार्णव ? (३) नीति (४) अद्‌भुत रामायण (५) लक्ष्मीनख-शिख (६) वार्ता संस्कृत (७) ककारादि सहस्रनाम (८) गया यात्रा (९) गयाष्टक (१०) द्वादश दलकमल (११) कीर्तन की पुस्तक (१२) संकर्षणाष्टक (१३) दनुजारि स्तोत्र (१४) बाराह स्तोत्र (१५) शिवस्तोत्र (१६) श्रीगोपाल स्तोत्र (१७) भगवत् स्तोत्र (१८) श्रीरामस्तोत्र (१९) श्रीराधास्तोत्र (२०) रामाष्टक (२१) कालियकालाष्टक।

इनकी कविता इनके अगाध पांडित्य की परिचायक है। ये महाकवि केशवदास के समान क्लिष्ट शैली के परिपोषक थे तथा उन्हीं की रीति पर काव्यरचना में सभी प्रकार के छंदों का समावेश करते थे। इन्हें अलंकारपूर्ण श्लेष और यमक पर बहुत प्रेम था और इसकी भरमार इनकी कविता में सर्वत्र है। प्रसाद गुण की कमी का कारण अनेकार्थक या अप्रचलित शब्दों का विशेष प्रयोग है। इन्हें अत्युक्तिपूर्ण रचना विशेष प्रिय नहीं थी और समास बाहुल्य न होते हुए भी अनुकूल तथा हृदयग्राही शब्दों के प्रयोग से ओज की मात्रा में कमी नहीं है। नीति या ज्ञान-कथन के समय या श्रृंगार–

वर्णन के अवसर पर या शांतिरस की रचना करते हुए इनकी भाषा अत्यंत सरल, सरस और स्वाभाविक होती थी। उदाहरण के लिए दो चार पद यहाँ उद्धृत कर दिए जाते हैं।

सब केसव केसव केसव के हित के गज सोहते सोभा अपार हैं।
जब सैलन सैलन सैलन ही फिरैं सैलन सैलहिं सीस प्रहार हैं॥
'गिरिधारन' धारन सों पद कंजल धारन लै बसु धारन फार हैं।
अरि बारन बारन बारन पै सुर बारन बारन बारन बार हैं॥

(जरासंधबध महाकाव्य)

सिंधु-जनित गर हर पियो मरे असुर समुदाय।
नैन-बान नैनन लग्यो भयो करेजे घाय॥

(भारतीभूषण)

जाहि बिबाहि दियो पितु मातु नै पावक साखि सबै जग जानी।
साहब सो 'गिरिधारन जू' भगवान समान कहैं मुनि ज्ञानी॥
तू जो कहै वह दच्छिन है तो हमैं कहा बाम है बाम अयानी।
भागन सों पति ऐसो मिलै सबहीन को दच्छिन जो सुखदानी॥

(रसरत्नाकर)

जगह जराऊ जामैं पड़े हैं जवाहिरात
जगमग जोति जाकी जग मैं जमति है।
जामैं जदु जानि जान प्यारी जातरूप ऐसी
जगमुख ज्वाल ऐसी जोन्ह सी जगति है॥
'गिरिधरदास' जोर जबर जवानी को है
जोहि जोहि जलजहू जीव मैं जकति है।
जगत के जीवन के जिय सों चुराए जोय
जोए जोषिता कों जेठ जरनि जरति है॥

(ग्रीष्म वर्णन)

भयो भयंकर शब्द महान गगड़ गड़ गड़ड़ड़ ।
फट्यौ खंभ द्वै खंड कराल ककड़ कड़ कड़ड़ड़ ॥
बढ़यो कोटि रवि तेज झमकि झझड़ झड़ झड़ड़ड़ ।
भगे दनुजगन देखि सरूप सड़ड़ सड़ सड़ड़ड़ ॥
भड़ भड़ड़ भड़ड़ परवत गिरहिं हड़ड़ हड़ड़ हाली धरनि ।
अहि कमठ कोल करि थरथरे भए तेज तें हत तरनि ॥

(नृसिंहकथामृत)

ग्रन्थ—परिचय

यदि कहा जाय कि हिंदी-साहित्य शृंगार-रस-मय है तो कोई अत्युक्ति नहीं। नवरस में शृंगाररस ही को प्रधानता दी गई है। उसके देवता भी कौन हैं? श्रीकृष्णचन्द्र आनंदकंद। महाकवि गिरधरदासजी ने ग्रंथ-रचना में भी अलंकार नहीं छोड़ा! शृंगाररस के प्रभु की कथा और काव्य वीर रस में कह गए। यह तो असंगति अलंकार का अनुपम उदाहरण है। इन्होंने स्यात् महाभारत के श्रीकृष्ण को आदर्श माना है, हिंदी साहित्य के देवादि शृंगारी कवियों के श्रीकृष्ण को नहीं। एक दिन अनेक महात्मा इनके यहां बैठे हुए भगवत्संबंधी विनोद कर रहे थे कि इन्होंने उनमें से एक महात्मा से कहा कि 'भगवान् श्रीकृष्णचंद्र में श्रीभगवान रामचंद्र से दो कला अधिक थीं'। उक्त महानुभाव ने उत्तर दिया कि 'जी, चोरी और जारी'। परंतु इन्हें अपने श्रीकृष्णचंद्र में ये दोनों बातें नहीं दीख पड़ीं। इन्होंने शृंगार और वीररस को एकात्मक माना है, वीर हृदय को शृंगार रस से हीन नहीं और न विनोदप्रिय शृंगारी पुरुष को वीरता से हीन। तात्पर्य यह कि इन्होंने श्रीकृष्णचंद्र का चरित्र चित्रण दोनों ही रूप में किया है। जरासंधवध महाकाव्य में श्रीकृष्णचंद्र युद्ध-नीति-कुशल तथा वीर-श्रेष्ठ चित्रित किए गए हैं।

इस काव्य की कथा कंस की मृत्यु से आरंभ होती है। प्रथम सर्ग में कंसकी दोनों स्त्रियाँ अपने पिता से पति के मारे जाने का वृत्तांत कहती हैं जिस पर वह बदला लेने के लिए मथुरा पर चढ़ाई करता है। तीन सर्गों में जरासंध की सेना का और मथुरा तक जाने का वर्णन किया गया है।

पाँचवें में यदु-मंत्र और छठे में मथुरा के घेरे जाने का वर्णन है। सातवें और आठवें मे उग्रसेन की सेना के योगों तथा उनकी चतुरंगिणी वाहिनी का वर्णन दिया गया है। नवें में युद्धारंभ और दसवें में पश्चिम द्वार के युद्ध का वर्णन दिया गया है। ग्यारहवें में उत्तर द्वार के युद्ध का वर्णन है। पुस्तक यहीं तक लिखी गई थी और अपूर्ण है। भारतेंदु जी की कविता शैली इनसे भिन्न थी इससे उन्होंने इस ग्रंथ को पूर्ण कराने के विचार से पटने के स्वर्गीय बाबा सुमेरसिंह साहब ज़ादः से कहा था पर नहीं हुआ। इसके अनंतर स्व० बाबू रामदीनसिंह ने यह कार्य साहित्यरत्न पं० अयोध्या सिंह उपाध्याय को सौंपा था पर दुर्भाग्य यह ग्रन्थ वैसाही रह गया। यह ग्रन्थ आधे से कम नहीं है तो अधिक भी नहीं हुआ है क्योंकि कम से कम दो सर्ग में तो दोनों द्वारों के युद्ध का वर्णन रहेगा। एक में सोलह बेर चढ़ाई करने का उल्लेख रहेगा। इसके अनंतर कालयवन और मुचकुंद की कथा तथा प्रवर्षण गिरि से द्वारिका जाने तक के वर्णन में चार सर्ग लग ही जाएँगे। इसके अनंतर पांडवों के यज्ञारंभ के समय दिग्विजय करते हुए भीमार्जुन के साथ जरासंध के राज्य में जाकर मल्लयुद्ध में उसके बध कराने के वर्णन में भी तीन सर्ग लगेंगे। इस प्रकार दस सर्ग की कमी रह जाती है जिसकी पूर्ति का होना या न होना करालकाल के पेट में छिपा है।

हिंदी-साहित्योद्यान के, जिसे साहित्य-कानन कहना विशेष उपयुक्त है, माली गुच्छे बनाने में जितने पटु दिखलाई देते हैं उतने मालाएं ग्रथित करने में नहीं दिखलाते। हिंदी के कविगण स्फुट कविता के करने, नायिका भेद, नखशिख, हाव भावादि वर्णन ही में अपनी विदग्धता, काव्य-पटुता और

कौशल दिखला कर रह गए। उन्होंने, दो चार महा कवियों को छोड़कर, कथा प्रसंग को महाकाव्य या सर्गबंध में सांगोपांग उतारने का प्रयत्न ही नहीं किया। यही कारण है कि संस्कृत के ऐसे ऐसे महाकवियों का आदर्श रहते हुए भी हिंदी में इस प्रकार के काव्यों का अभाव सा है। गोस्वामी तुलसीदासजी का रामचरितमानस महाकाव्य से कहीं बढ़ कर है। महाकवि केशवदास की रामचन्द्रिका महाकाव्य कही जा सकती है पर 'सर्गबंध महाकाव्य' नहीं है। इन कारणों से जरासंधवध-महाकाव्य ही हिंदी का पहिला महाकाव्य माना जा सकता है।

महाकवि दंडी ने काव्यादर्श में महाकाव्य के लक्षण लिखे हैं उन्हीं का कुछ विवरण पहिले यहाँ दे दिया जाता है। 'महा-काव्य मंगलाचरण, नमस्कार और कथावस्तु-निर्देश से आरंभ होताहै। कथावस्तु ऐतिहासिक हो या किसी सत्य घटना पर आश्रित हो। नायक चतुर और उदात्त हो। नगर, समुद्र, पर्वत, ऋतु, चंद्र तथा सूर्योदय, उद्यान तथा जलक्रीड़ा, मधु-पान और प्रेम का वर्णन हो। विरह-जनित प्रेम, विवाह, कुमारो त्पत्ति, मंत्र, राजदूतत्व, चढ़ाई, युद्ध और नायक का अभ्युदय वर्णित हो। अलंकृत, विस्तृत तथा रस और भाव से पूर्ण हो। कोई सर्ग बहुत बड़ा न हो। छंद श्रवणीय हों। सभी सर्गों के अंत में भिन्न छंदों का प्रयोग हो।' महाकाव्य के इन लक्षणोंकी कसौटी पर जरासंधबध महाकाव्य को कसना अनुचित न होगा। परंतु साथ ही यह विचार भी रखना होगा कि यह वीर-रस-पूर्ण है जिससे शृंगार रस के आलंबनोद्दीपनादि की कमी विशेष न खटकेगी। कहा भी है कि

न्यूनमप्यत्र यैः कैश्चित् अंगैः काव्यं न दुष्यति।
यद्युपात्तेषु संपत्तिः आराधयति तद्विदः॥

अर्थात् कुछ अंगों की कमी से काव्य दूषित नहीं होता यदि उस में आए हुए गुणों की सम्पत्ति विद्वानों को प्रसन्न करती है।

जरासंधवध-महाकाव्य के प्रथम सर्ग के पहिले दो दोहों में मंगलाचरण, नमस्कार और कथावस्तु निर्देश तीनों का समावेश हो जाता है । कथावस्तु श्रीमद्भागवत से लिया गया है इस लिये (पौराणिक) ऐतिहासिक है और श्रीकृष्ण चंद्र भी चतुर-शिरोमणि और उदात्त नायक हैं। शृंगार रस का काव्य न होने से 'उद्यानसलिलक्रीडामद्यपानरतोत्सवैः' आदि का वर्णन नहीं है पर वीर रस पूर्ण काव्य के अनुकूल 'मंत्रदूतप्रयाणाजिनायकाभ्युदयैः' का अति उत्तम वर्णन है। अलंकार का भी यथेष्ट समावेश किया गया है और वीरों की उद्दंडता, साहस, अस्त्र-शस्त्र-चालन-नैपुण्य का वर्णन प्राबल्य पूर्ण है। युद्ध करते समय एक दूसरे पर शाब्दिक बाणों का निक्षेप करना भी योग्यता तथा कहीं कहीं विनोद के साथ साथ वर्णित है। दो तीन सर्ग कुछ बड़े कहे जा सकते हैं। छंद अनेक प्रकार के हैं पर सभी कथा के अनुकूल हैं। सर्गों के अंत में भिन्न वृत्त का बराबर प्रयोग किया गया है। इस प्रकार देखा जाता है कि यह ग्रन्थ महाकाव्य के लक्षणोंसे कहीं भी च्युत नहीं हुआ है और जो कमी है उसके मार्जनीय होने का कारण पहिले ही लिख दिया गया है।

इस प्रकार यह ग्रंथ महाकाव्यके सभी लक्षणों से युक्त होने के कारण महाकाव्य कहा जा सकता है। यह ग्रंथ वर्णनात्मक है और इस में कथा भाग बहुत ही अल्प है । जरासंध अपनी पुत्रियों के मुख से कंस की मृत्यु का समाचार पाकर क्रोध करता है और सेना एकत्र कर मथुरा को जा घेरता है। उग्र-सेन कृष्णादि के साथ मंत्रणा करके युद्धार्थ बाहर निकलते हैं

और युद्धारंभ होता है। इतना ही मात्र कथा भाग है पर सैन्य-संचालन, प्रधान सेनानियों के वीर दर्प, सेना के चारों अंग, वीरोंके युद्ध करते समय दर्प-पूर्ण कथोपकथन आदि के वर्णन ही से सारा ग्रंथ भरा पड़ा है। कथा भाग गौण रूप में है और उसका उपयोग केवल वर्णन करने ही के लिए प्रसंग वश कर लिया गया है।

इस ग्रन्थ में शब्दालंकारों की भरमार है, यमक का तो कुछ कहना ही नहीं है सारा ग्रंथ ही इस अलंकार से भरा पड़ा है, अनुप्रास की कमी ही नहीं है और पुनरुक्ति तथा श्लेष का कहना ही क्या है। आठवें सर्ग में सातवाँ पद गज बंध, अठारहवाँ अश्वबंध, उन्नीसवाँ रथबंध और चालीसवाँ पदातीबंध चित्र काव्य हैं। अर्थालंकारों की कमी अवश्य है। उपमा की कमी खटकती है और 'दिन ससि तेजहत' के समान की उपमा के कई स्थानों पर आजाने से वह और भी स्पष्ट हो जाती है।

वीर रस के काव्य या स्फुट कविता लिखने में भी, देखा जाता है कि ओज लाने के लिए कविगण शब्दों के तोड़ने मरोड़ने,अक्षरोंकी पिच्ची कर डालने और व्यर्थ ही उनका द्वित्व करने में अपनी बहादुरी दिखाते हैं परन्तु यह दोष इनके ग्रन्थ में नहीं आया हैं। महाकवि भूषण हिंदी साहित्य में वीर रस की कविता के आचार्य माने जाते हैं। इन्होंने केवल स्फुट कविता लिखी हैं,संगृहीत पदोंको एक सिलसिलेसे ग्रथित करने पर शिवराजभूषण भी बना है। यह कहना कि वे प्रबंध-काव्य लिख ही नहीं सकते थे, धृष्टता मात्र समझा जाएगा पर ऐसा कहना ही पड़ता हैं। छत्रपति महाराज शिवाजी, पन्ना राज्य के संस्थापक महाराज छत्रसालजी से नायकों के रहते और इतनी लंबी अवस्था पाने पर भी वैसा न करना उनकी अश-

कता का बोधक सा जान पड़ता है। 'हयवर हरट्ट गयबर गरट्ट' आदि से प्रयोगों की तो उनकी कविता में भरमार है। वीर रस के अन्य कवियों में सूदन, लाल, मान आदि का नाम विशेष कर उल्लेखनीय है। सूदन का सुजान चरित्र प्रबंध काव्य है पर महाकाव्य के लक्षणों से युक्त नहीं है। इसमें मिलित वर्णोंकी अधिकता है और शब्द बहुत तोड़े मरोड़े गए हैं। लाल का छत्रप्रकाश दोहे चौपाइयों में है और अनेक प्रकारके छंदों के न होने से उसमें रोचकता की कमी है। मान का राज-विलास अठारह विलासों में विभक्त है और राजपुताने की ओर के शब्दों की प्रचुरता तथा मिलित वर्ण या वर्णों के द्वित्व की अधिकता है।

इस प्रकार विचार करने से इतना मालूम हो जाता है कि यह ग्रंथ हिंदी साहित्य के अन्य वीर रसात्मक काव्यों के मध्य में शोभा पाने के योग्य है। स्व० बा० राधाकृष्णदासजी लिखते हैं कि 'जरासन्धवध महाकाव्य बहुत ही पांडित्य पूर्ण वीर रस प्रधान ग्रंथ है। भाषा में यह ग्रन्थ एम० ए० का कोर्सहोने योग्य है।' इसकी तुलना के भाषा में बिरले ही ग्रंथ मिलेंगे। इस ढंग का ग्रंथ केवल कविवर केशवदास कृत 'रामचंद्रिका है। बा० गिरिधरदासजी ने कहावतों का भी कविता में कहीं कहीं प्रयोग किया है जैसे 'दाल भात महं मूसर जैसो'। फारसी और हिंदी शब्दों का समास भी बहुधा कर डलाते थे जैसे अंगभूमि, गुनकुन्दगार आदि। कहीं कहीं 'भिरा' के लिए अभिरो का सा प्रयोग मिलता है 'जैसे आनक सों अभिरो रन भीम'। पर इसका समाधान आभिरो अर्थ से किया जा सकता है।

जरासंधवध महाकाव्य

पूर्वार्ध

१. सर्ग

[दोहा]

प्रभु-पद-नख सासि कर निकर, निकरत जब उर व्योम ।
प्रेम-पयोनिधि अति बढ़त, कढ़त मोह तम तोम ॥ १ ॥
जरा-सुवन रिस ते जरा, कंस मरा जेहि काल ।
तासु समर बरनत अहौं, समर जनक जय-हाल ॥ २ ॥

[कवित्त]

चेतन सरूप ब्रजमंडल अनूप प्रति
बुद्धि रूपी मथुरा बिरंचि रचीं खरी है ।
नृपति सुधर्म उग्रसेन ताको राज करै
सम-दम आदि जदुबंसी भीर भरी है ॥

---

१ नख-सासि-कर-निकर=नख रूपी चंद्र किरणों का समूह, श्वेत नखों की चंद्र किरणों से उपमा । उर-व्योम=हृदयरूपी आकाश । चंद्रोदय से समुद्र में भाटा आता है और अंधकार नष्ट होता है ।

२ जरा=जरासंध की माता का नाम, वह राक्षसी जिसने जन्म समय के जरासंध के दो टुकड़ों को जोड़कर उसे जीवित कर दिया था ।

रानी परतिष्ठा तामैं प्रविस्यो अज्ञान दैत
भयो सुत कंस लोभ रूप देव अरी है।
मोह रूप जरासंध अस्ति प्राप्ति ताकी सुता
जोगता विचारि दोऊ भोजराज बरी है ॥ ३ ॥
अस्ति प्राप्ति प्यारी मोह ससुर सहाय पाय
कंस ने पुरी के माँह राज छीनि लयो है।
भागे जदुबंसी देव अंसी 'गिरिधरदास'
जनक सुधर्म बंदीखाने बंद कियो है ॥
काम, क्रोध, दंभ, रोस अघ, बक आदि दैत
संगी बने आय फूल्यो सबनि को हियो है।
तीन लोक माँह, देव-मुनि थोक माँह जाय
विक्रम अरोक सोक-ओक करि दियो है ॥ ४ ॥
अनुज सुधर्म को सुकर्म रूप देवक है
तासु सुता देवकी सुबासना गनाई है।
ब्याही सो सुजान सील रूप बसुदेव जू कों
बिदित जहान ताकी अति ही बड़ाई है ॥
'गिरिधरदास' भए गिरिधर पुत्र ताके
ज्ञान रूप आप त्यों बिराग बल भाई है।

---

३ खरी=शुद्ध, अच्छी। बंदीखाने = कारागार, जेल। थोक = समूह। ओक = घर। भोजराज = उग्रसेन।

सानुग निपात्यो कंस उग्रसेन राजा भयो
अस्ति प्राप्ति पिता पास खबरि जनाई है ॥ ५ ॥

[चौपाई]

आकसमात असह अस बानी । सुनी जरासुत सुता बखानी ॥
बिसमित सहमि रह्यो भट भारी । सुत्त सिंह जनु हन्यो सिकारी॥६॥
पुनि जामात सोक मत हीनो । बिबिध भाँति तहँ रोदन कीनो ॥
बड़े शब्द सों हाय पुकारा । चोट पाय जिमि नदत नगारा ॥७॥
हा रनधीर बीर बल–आकर । भोजमित्र–अंबोज–दिवाकर ॥
जहि परदोस अस्त भो कैसे । फिरिहैं अब उलूक सुखमै से ॥८॥
जीति सुरासुर मुनि नर नागन । अनुचित किय सिसु-कर असुत्यागन
उतरि नदीस नदी नद नारा । गोपद बूड़त कोउ न सँभारा ॥९॥
कै बैकुंठ लेन के कारन । तजि तन तत्र गयो हरि मारन ॥
अथवा तो असु अथवा यासों । हौं अब अमर समर परकासों ॥१०

[दोहा]

इमि अनेक बचनहि कहत, राजा सोक अधीर ॥
उर न मात जामात-दुख, जिमि घट मैं सर नीर ॥११॥

५–सानुग=भाई सहित, कंस के आठ भाई भी मारे गए थे।

९ असुत्यागन=प्राण छोड़ना, मारा जाना ।

१० अथवा=डूबा, अस्त हुआ, एक वियोजक अव्यय, किंवा ।

११ मात=अमाता है, अँटता है ।

[चौपाई]

पुनि नृप महाक्रोध में पूरो । भयो रुद्र सम विग्रह रूरो ॥
लोचन ललित लसे दोउ कैसे । कुंकुम रँगे कोकनद जैसे ॥१२॥
वार बार करतल कहँ मलिकै । निज कर पीठ रदन सों दलिकै ॥
लेत साँस तहँ गरम बिसाला । मनु उर अगिनि धूम की माला१३॥
कंपि उठ्यो पीवर तन कैसे । चले अचल भुव कंपित जैसे ॥
पुनि नर-राव राव करि भारी । बोल्यो सभा बीच ब्रतधारी ॥१४॥
उग्रसेन, बल, स्यामहि हनिकै । सुता-सोक हरिहौं पन ठनिकै ॥
है आभीर छत्रपति मारा । स्वान जथा गज कुंभ बिदारा ॥१५॥
जब मरि मातुल के ढिग जैहैं । तब फल निज करनी को पैहैं ॥
नृपहि उचित अपराधी दंडन । बुधहि उचित तनब्याधि बिहंडन॥१६
सुता! सोक त्यावहु जनि मन मैं । छत्रिहि भलो मरन है रन मैं ॥
तो दुख सँग अपकारी प्रानहिं । मैं करिहौं अभाव तजि बानहिं १७॥

[दोहा]

इबिधि बृथा करि जल्पना, रीते जलद समान ।
सुमिरि सुमिरि जामात-बध, क्रुद्ध भयो बलवान ॥ १८ ॥

---

१२ विग्रह रूरो=युद्धोन्मुख, लड़ने को तैयार । कुंकुम=केसर, रोली । कोकनद=लाल कमल ।

१४ राव=राजा, प्रण ।

१५ आभीर=अहीर, गोप ।

१९ हय चरन चलन सम=चलते हुए घोड़े के पैरों के समान ।

[निर्मात्रिक चित्र, छप्पय]

फरफर फरकत अधर चपल हय चरन चपल सम ।
नयन दहन बतरनत समद तन लखत अपर जम ॥
परम धरमधर धरम करम कर सरस गरम रन ।
धरत कनकमय बरम परम बल नदत सजल घन ॥
गरधर हर सम जस जग फबत नवत सकल नर बर जबर ।
पर धरत अचल हलचल करत टरत सभय बनकर बबर ॥ १९ ॥

[सोरठा]

तब बुलाइ निज दूत जे गति मैं मजबूत अति ॥
कहत बृहदरथ पूत मरुतवान मरुतन जथा ॥ २० ॥

[कवित्त]

जेते मम संगी दुरजोधनादि जंगी तुम,
जायकै बखानौ हाल सब सों जलीके सों ।
मथुरा में भैम बढ़े राम-स्याम बल पाय,
मार्‍यो कंस राय करे करम अलीके सों ।
ताको बैर लैहौं मारि सत्रुन नसैहौं महि,
जामैं परे पापिन के मुख फीरि फीके सों ॥

---

१९ बतरनत=बतलाता है । गरधर=विष को धारण करने वाले । पर=पैर । अचल=पर्वत । बबर=शेर ।

२० मरुतवान=वायु देवता । मरुतन=उंचास पवन ।

धनी धरनी के नीके आपुनी अनी के संग,
आवैं जुरि जीके मो नजीके गरजी के सों ॥२१॥

[दोहा]

इमि सब राजनि सों बरनि, लावहु अन्न लिवाय ।
सुनि नृप-सासन आसु ते, चले बाजि लौं धाय ॥२२॥

[चौपाई]

राज-समाज खबरि सो बरनी । आए, नृपदल सों भरि धरनी ॥
सबसों मिलि पूज्यो नरराई । फूली मनु नृप विजय लराई ॥२३॥
दल साजन की आज्ञा दीन्हीं । तेइस अच्छोहिनि रँग भीनी ॥
सजी सैन छबि बरनि न जाई । मनु बिधि करामाति सब आई २४॥
जरासंध-दल-साजहिं कहई । धरा छत्र अस को कवि अहई ॥
लखत ठगत दृग कहत बैन है । मगध सैन सम मगध सैन है २५॥

[दोहा]

बिबिध भाँति बाजे बजैं, भेरी पटह निसान ।
रज तें रजनी दिन भयो, पूरि गयो असमान ॥२६॥

उग्रसेन-चतुरंग-वर्णनं नाम प्रथम सर्गः ।

---

२१ जलीके=(ज+लीक) अच्छे कायदे के साथ । भैम=यादव । अलीके=(सं० अ+हिं०लीके) मर्यादा रहित, अप्रतिष्ठित । जीके=जीवटवाले, साहसी । नजीके=पास । गरजी के सों=(बदले की उत्कट इच्छा से) स्वार्थी के समान ॥

२५ धरा छत्र=पृथ्वी के छाती पर अर्थात् पृथ्वी पर ।

२. सर्ग

[चौपाई]

निकरे पत्ति चरम धरि धरिकै । अरि मर्दन को प्रन करि करिकै ॥
झलकत कुंडल कनक जराए। अहित हितन दुख सुख बरसाए।। १॥
राजै पाग बटी बिधि नाना। अरक तेज बहु बिधि अधिकाना ॥
सोहत संग राम रस रूरो । सरपि सनेह लखावत पूरो ।।२॥
धरे अपर चूरन बिधि नीकी । सोभा अति सुबास बूटी की ॥
धाई सरबत रस बहुरंगत । बैद दुकान कि पैदल पंगत ।।३॥
महत मतंग अंग अति कारे । चढ़ि चढ़ि चले बीर मतवारे ॥
गजानीक छबि बरनि न जाई। मानहुँ जलदावलि दरसाई ।।४।।
कुंभकरन अतिकाय बिराजत । बलधर मेघनाद बर गाजत ॥
चमकत वज्रदंष्ट्र प्रति तीछन । लसत अकंपनद्ध मर ईछन ।।५।।

---

१ पत्ति=पैदल सिपाही । चर्म=ढाल । अर्दन=दलन करना, मारना । जराए=जड़ाऊ ।

२ पाग=पगड़ी, पुष्टाई की दवा । बटी=बटी हुई, दवाओं की बटी । अरक=सूर्य, आसव ।

३ बूटी=बनौषधि, भाँग । धाई=धव का वृक्ष ।

४ गजानीक=हाथियों की सेना ।

५ कुंभकरन=बड़े कानवाला । अतिकाय=भारी शरीरवाला, एक राक्षस । मेघनाद=गंभीर गर्जन करनेवाला । वज्रदंष्ट्र=एक राक्षस, बड़े दाँत । अकंपनद्ध=एक राक्षस का नाम, स्थिर, न काँपनेवाला । ईछन=नेत्र ।

महावीर धौराहर सोहत । जातरूप द्युति उत्तम जोहत ॥
करत ख्याल मति साँति लहै ना । लंकापुरी कि बारन-सैना ॥६॥
सुरथ समूह चले बहु बढ़ि बढ़ि । जिन पै चढ़े बीर सरि मढ़ि मढ़ि ॥
तिन रथ माँझ झाँझ बहु घंटा । बुध लौं करहिं परस्पर टंटा ॥७॥
सुबरन द्विज सोहे बिधि रूरी । छत्री लसत कांति दिसि पूरी ॥
तरुन बैस बर धनी बिराजैं । दास सुलच्छन सोभा साजैं ॥८॥
ऐनन लसत सुजोती सोहत । मोहत सुरगुरु पैया जोहत ॥
राज मारगन भीर सजाई । रथ-सैना कै पुरी सोहाई ॥९॥
बाजी वृंद चपल छबि छावैं । हींसत हींसत सत्रु भगावैं ॥
चारु चारजामा मन मोहैं । सब बिधि हरि हरषित चित सोहैं॥१०॥
रतनन की पूँजी अति राजैं । कनक करधनी अति छबि छाजैं ॥
बहु सुदेस पट्ठा हैं रूरे । ताजी आप जुद्ध गति पूरे ॥११॥
हैकल ही मैं जो अनमोली । लिए सईस सिपाही टोली ॥
बिबिध बरन बागन सों भ्राजत । हयदल है कि भूप कोउ राजत। १२।

---

६ धौराहर=धरहरा, ऊँची अटारी । जातरूप=सोना । बारन=हाथी ।

८ सुबरन द्विज=सोने का पताका, अच्छे वर्णवाले । छत्री=रथों की छत, क्षत्रिय । बैस=अवस्था, वैश्य । दास=शूद्र, सईस आदि सेवक ।

११ पट्ठा=चौड़ा गोटा ।

१२ हैकल=गले का एक गहना । बागन=लगाम, जामा ।

[दोहा]

बारन के बारन निरखि, बारन करिय बिचार ॥
तिस बारन बारन करिय, बारन जो परवार ॥ १३ ॥
गने पदाती बीर सब, अरिघाती रनधीर ॥
दोउ आँखें राती किए, लखि मोहे सुर बीर ॥ १४ ॥
सोहैं जान सुजान जुत चहैं व्योम उड़ि जान ॥
चलत करहिं अरि जान बिनु लखि रवि जान लजान ॥ १५ ॥
बने तुरंग सुरंग सब कूदहिं जथा कुरंग ॥
चढ़े सवार उमंग भरि करहिं जंग पर दंग ॥ १६ ॥

[चामर छंद]

सैन मागधेस की बिसेस सोहती भई ।
जाहि जोहि देव सैन ऐन मोहती भई ॥
कौन बुद्धि-भौन है बखानि तौन जो सकै ।
भारती चकित्त चित्त तित्त है खरी तकै ॥ १७ ॥
संख भेरि दुंदुभी निसान घोर बाजते ।
जोर सोर के सुने समस्त मेघ लाजते ॥

---

१३ बारन=कई बार ।

१४ राती किए=लाल किए ।

१५ जान (सं० यान)=रथ ।

१६ सुरंग=अच्छे रंगवाले, लाल । कुरंग=हरिण ।

१७ ऐन=(अ०) ठीक, पूरी तरह ।

वीर लै कमान हाथ मोद सों फिरावते ।
ताव ते बजावते सोहावते देखावते ॥ १८ ॥
आजु राम श्याम कों प्रहारि बान मारिहौं ।
उग्रसेन सीस काटि भूमि बीच डारिहौं ॥
बुद्धि ऐन बैन यों अनेक बीर भाषते ।
केसरी समान सान औ गुमान राखते ॥ १९ ॥
गर्जि गर्जि तर्जि तर्जि भूप जान बैठते ।
जीत प्रीत पूरलै गरूर मोछ ऐंठते ॥
अश्व के सवार अश्व मोर ज्यों नचावते ।
जुद्ध रंगभूमि बीच मोद सों मचावते ॥ २० ॥
शंख को बजाय शब्द तीन लोक पूरते ।
बीर तेज सों चले दिनेस ओर घूरते ॥
मागधेस सैन देखि नैनहू ठगावते ।
जीव मैं अचर्ज इंद्र आदि देव पावते ॥ २१ ॥
जै जराकुमार की पुकारते सबै बली ।
जीति बीच प्रीति रीति बाढ़ती भई भली ॥
आजुही अजादवी धरा करौं बिचारिकै ।
बीर मागधेस के लसैं अनंद धारिकै ॥ २२ ॥

---

१८ ताव=आवेश, अभिमान ।

१९ केसरी=सिंह ।

२२ अजादवी=यादवों से हीन ।

सिंधु के समान सैन भूप की सुसोहती ।
आपने प्रताप सो बिरंचि बुद्धि मोहती ॥
कौरवेस आदि संग मागधेस के बने ।
जीतिबे चले गोपाललाल को सोहावने ॥ २३ ॥
भूमिपाल मुख्य भिन्न भिन्न सैन कों लिए ।
उग्रसेन पै चले अनंद धारिकै हिए ॥
देव दैत तूल बीर जुद्ध मोद मै रले ।
वर्म चर्म खग्ग धारि सोहते भए भले ॥ २४ ॥

[हरिगीती छंद]

भे भले सोहत सकल नृप कहि पृथक पावै पार को ।
सासन धरे सिर पर प्रबल मागध मनुज सरदार को ॥
जब राजगिरि तें चलेउ दल मथुरा नगर भगवान पैं ।
तब भूरि पूरी धूरि उड़ि उड़ि शब्द सम असमान पैं ॥२५॥
धुंकार धौंसन की बढ़ी हुंकार भूमिपतीन की ।
टंकार बर कोदंड की भंकार भेरी पीन की ॥
ललकार बीरन की परम चिक्कार घोर रदीन की ।
धुनि भरी दस दिसि संख की हींसनि तुरग तुरकीन की ॥२६॥

---

२४ तूल=तुल्य, समान ।

२५ राजगिरि=महाभारत के पहले और लगभग ढाई सहस्र वर्ष अनंतर तक यह स्थान मगध राज्य की राजधानी रही । इसे राजगृह भी कहते हैं ।

२६ रदीन=हाथी ।

बहु छत्र सोभित तत्र छबि सरवत्र दल फैली भई।
जिनकी निरखि दुति इंदु-दुति असमान मैं मैली भई॥
बहु केतु कांति-निकेतु जय के हेतु रथ पै राजहीं।
सोइ केतु ग्रह से अरिन कौं जस सेतु सम छबि छाजहीं॥२७॥
नाना पताका फरहरैं सुबरन सलाका भ्राजहीं।
सित असित पीरे हरित अगनित बरन ब्योम बिराजहीं॥
गज रथ धनुष हय चक्र नक्र अनेक आकृति सोहहीं।
नृप केतु दल के केतु सुरपुर केतु छन महँ मोहहीं॥२८॥
रन-साज साजि नरराज सकल दराज बल तहँ राजहीं।
तन वर्म धरि असि चर्म कर भट धर्मधर छबि छाजहीं॥
दै ताल रन बिकराल बिग्रह काल के सम तरजहीं।
मतिधाम जीतन काम लै लै नाम बहु बिधि गरजहीं॥२९॥
खासे तुरग खासे सकल भासे हवा से दौरतं।
रतनन भरे सोभा धरैं बन आम जैसे बौरतं॥

---

२७ केतु=पताका, झंडा। केतु ग्रह=फलित ज्योतिष में इसे नवग्रह में एक ग्रह माना है, यह अशुभ सूचक है।

२८ सलाका=रथ के ऊपर का वह डंडा जिसमें झंडिया लगी रहती हैं। असित=(अ=नहीं-सित=सफेद) काला। नक्र=मगर, घड़ियाल। नृप केतु ......मोहहीं=राजा के पताका-समूह का झंडा स्वर्ग की ध्वजा को क्षण में मोह लेता है।

२९ काम=अर्थ, इच्छा।

टपटप सुबोलहिं टाप टापहिं गिरिन झपझप हींसते।
जे उछरि अंबुधि लांघते हय संघ ते दल दीसते ॥३०॥
अति तंग जिन पै तंग कसि रनरंग हित नृप सोहते।
धरि जीनपोस सरोस तन–दुति द्योसपति मन मोहते॥
कर मैं ललाम लगाम लै अभिराम अश्व नचावते।
मगधेस दल बर बेस बीच बिसेस मोद मचावते॥३१॥
तिमि बैठि रथ जय-अरथ नृप पथ परम सोभा साजते।
रन चक्र–धुनि सुनि सक्र सम ह्वै बक्र अरि जेहि भाजते॥
तिमि सारथी प्रभु स्वारथी बैठे रथन पर दरसते।
सह मोद जुद्ध–बिनोद सहित प्रतोद गहि कर करसते॥३२॥
जिनकी धुरी दुति लाख दुरि बर बीजुरी असमान मैं।
धौरे बरन घोरे जबर जोरे जराऊ जान मैं॥
कूबर निरखि दूबर भयो उर विश्वकर्म बिचारिकै॥
नहिं भारती कहि सकति छबि हिय हारती निरधारिकै॥३३॥
वारन पहारन से हजारन सत्रु मारन सोहते।
भारी अमारी पीठ धरि कारी चमक घन मोहते॥

---

३१ तंग=दृढ़, दृढ़ता से घोड़े की जीन कसने का तस्मा। द्योसपति=दिवसपति, सूर्य।

३२ प्रतोद=चाबुक, कोड़ा।

३३ धुरी=अक्ष, वह डंडा जिसमें पहिया पहिराया रहता है और जिसके चारों ओर वह घूमता है। धौरे=धवल, सफेद। कूबर=रथ का छत।

बर झूल सोभा मूल झूलहिं दुरद मति झालर बनी ।
घंटा घने उर महँ बंध रव करत कंपै अरि–अनी ॥३४॥
गजगाह गंग प्रवाह सम निसिनाह दुति मोतिन लसै ।
सिर–चंद चंद दुचंद दुति आनंदकर मनिमय बसै ॥
करि सुंड उन्नत झुंड कोटिन कुंड मंडित सोहते ।
जिन पैं प्रचंड उदंड भट बरिवंड बीरन जोहते ॥३५॥
पैदल सुभट दल छबि भरे उज्जल बसन तन पै धरे ।
नृप साथ चाहत नाथ–हित अरि-माथ काटन प्रन करे ॥
असि, चर्म, धनु, सर, सक्ति, पट्ट, सुसुंडि, मुगदर, पवि, पदा ।
बिछुवा, कटार, दुधार, भाला, धरे कर करिकै अदा ॥३६॥
सपनेहुँ न दीन्ही पीठि जिन निज दीठि अरि सँग जोरते ।
अति लसे परिकर कसे कटि रस रसे पर–बल चोरते ॥
सिर पाग टेढ़ी भाग वर अनुराग रन मैं धारते ।
जादव रहित धरनी करौं इमि बिबिध बैन उचारते ॥३७॥
चतुरंग सहित उमंग मागध संग अति बलभौन है ।
सब पृथक करि बरनै सुकवि जग बीच ऐसो कौन है ?

---

३४ दुरद=द्विरद, हाथी ।

३५ गजगाह=(गज+ग्राह) हाथी की झूल । सिर-चंद=हाथी के मस्तक पर लटकनेवाला आभूषण जो चन्द्राकार होता है । दुचंद=(फा०) दूनी । कुंड=हौदा ।

३६ पवि=वज्र । पदा=पद्म, विष्णु का एक आयुध ।

३७ पर-बल=शत्रुबल ।

बाजत–सबद राजन–हृदय अहलाद साजन भरि रह्यो ॥
जासों सडर सुरराज सोच दराज उर महँ करि रह्यो ॥३८॥
अरि–हीय अति संका करन डंका अनेकन बाजते ।
सह साज जासु अवाज सुनि सुरराज डंका लाजते ॥
भारे दुरद कारे लसैं धारे नगारे पीठ पैं ।
जिनके बजानियाँ नभ लगे ते नीठि आवहिं दीठि पैं ॥३९॥
तुरही अरिन पुर हीन कर तुरही सबद दल भरि रह्यो ।
तिमि नाद कंबु कदंबु को सुनि अंबुनिधि लाजन बह्यो ॥
बोलहिं अरब्बी बहुत फब्बी सैन सो मगधेस की ।
मरफा चहूँ तरफा बजे झालरि अवाज बिसेस की ॥४०॥
तासे घने खासे बजैं त्रासे फिरैं रिपु भाजि कै ।
तिमि झाँझ बाजत झाँझ राजति जलद के सम गाजिकै ॥
करताल सहनाई सुहाई दिसनि छाई धुनि महा ।
बाजहि अधीरी बहु नफीरी सब्द सों दल भरि रहा ॥४१॥
भेरी बड़ेरी जाहि झेरी मुरलि बहुतेरी बनी ।
बर ढोल बोल अतोल बोलहिं सबन मनभावनि घनी ॥

---

३९ नीठि=कठिनता से ।

४० तुरही=मुख से फूंककर बजाने का एक बाजा । कंबु=शंख । कदंबु समूह, ढेर । मरफा= बाजा विशेष ।

४१ झाँझ बाजत झाँझ=मजीरे के समान बडे बाजे को झाँझ कहते हैं वैसे बाजों का झाँझ अर्थात् शब्द । करताल=सिंघा, नरसिंघा । अधीरी=तेज । नफीरी= (फा०) तुरही ।

मिरदंग औ मुहचंग चङ्ग सुढङ्ग संग बजावहीं ।
करताल दै दै ताल मारू ख्याल कड़खा गावहीं ॥४२॥

[दोहा]

अरु अनेक बाजन बजैं सजी सैन अति घोर ॥
सुरथ तुरग बारन सुभट भरे धरनि सब ओर ॥४३॥

[त्रिभंगी छंद]

इमि ते नृप राजैं तेज दराजैं रबि लै भ्राजैं चारु बने ।
अरि-रोग इलाजैं आयुध साजैं घन लैं गाजैं घोर घने ॥
रन जीतन काजैं भटन निवाजैं आनँद छाजैं जुद्ध ठने ।
मगधेस समाजैं लखि सुर लाजैं दुसमन भाजैं भीति सने ॥४४॥

[दोहा]

कनक कवच धरि धरि चले सहसन नृप सामंत ॥
बड़े बड़े बसुधाधिपति पृथक चले बलवंत ॥४५॥

जरासंध-चतुरंग-वर्णनं नाम द्वितीयः सर्गः ।

---

४५ बसुधाधिपति=(वसुधा + अधिपति)राजे ।

३. सर्ग

[छप्पय]

दंतवक्र भट चल्यो प्रबल नर-सक्र बक्रतर।
चार चक्र-जुत सुरथ चढ़्यो रथ मढ़्यो चक्र कर॥
एक-चक्र नृप जोग अंग सिसुमार-चक्र सम।
समर-नक्र दर सक्र सुखद भुज चार चक्र सम॥
सुर मैं गुरु काय विराट जिमि वृत्र असुर बलधरन मैं।
जिमि कुंभकरन निसिचरन मैं दंतवक्र तिमि नरन मैं॥१॥
चल्यो बिदूरथ बीर तीर तूनीर धनुष धरि।
संग रथिन की भीर सीरधर बीर बैर भरि॥
मुकुट हीर पट छीर बरन कसमीर तिलक सिर।
बल सरीर गंभीर नीरनिधि-सरिस धीर थिर॥
चढ़ि कीर केकि तसवीर जुत रथ जो चलत समीर सँग।
पर-पीर-करन लसतो भयो लोचन किए अबीर रँग॥२॥
चल्यो बीर दमघोस रोस को जोस बढ़्यो बर।
सुनि रन जाको घोस फिरहिं बल-कोस कोस भर॥

---

१ सक्र=शक्र, इंद्र। चक्र=पहिया, सेना, गोलाकार आयुध, हथेली या तलवे में वृत्ताकार रेखा चिन्ह। सिसुमार=विष्णु। दर=दलन करने वाला। गुरुकाय=बड़ा शरीर वाला।

२ कसमीर=केसर से तात्पर्य है, कश्मीरज। केकि=मोर।

तेज द्योसपति-सरिस ठोस बल तोष न रन कर ।
पोस ओस सम दुखद तजत सर सत्रु होस-हर ॥
रथ सब दिसि फैली फौज अति मैली लखि सुर सैन रति ।
मनि थैली अरपत जाचकन लस्यो चँदेली पुहुमिपति ॥ ३ ॥
चल्यो बीर सिसुपाल गहे करवाल ढाल कर ।
लोचन लाल बिसाल चारु मंदार माल गर ॥
ताल देत उत्ताल समर हित, सत्रु-काल-वर ।
धारे कवच प्रबाल, व्याल-मनि, लाल जालधर ॥
नरपाल-सिरोमनि चेदि नृप चढ़ि निहाल रथ व्याल रिसि ।
बिकराल मगध-महिपाल हित तक्यो बिहारीलाल दिसि ॥ ४ ॥
चल्यो साल्व नर-त्रान बीर परधान सानधर ।
बैठो जान महान, धरे तनत्रान अंग पर ॥
मति-निधान बलवान ख्यात भगवान-वैर-धर ।
सँग सुजान नर गान करहिं बाजहिं निसान बर ॥
अभिमान सहित रिपु-प्रान-हर बर कृपान चमकावतो ।
नृप सौभ लस्यो मगधेस हित सिंह समान हिंसावतो ॥ ५ ॥

---

३ बलकोस=बल का खजाना। पोस=पोष, संतोष। ओस=शीत।

४ उत्ताल=ऊँचा। प्रवाल=मूँगा। जालधर=जालीदार। चेदि=नर्मदा नदी के दोनों ओर का प्रांत। व्याल=हाथी।

५ नरत्रान=मनुष्यों का रक्षक, राजा। तनत्रान=कवच।

एकलव्य नृप चल्यो तबै बल द्रव्य कोस तन।
करत सव्य अपसव्य धनुष करतव्य बिचच्छन॥
देव पितर कहँ हव्य कव्य जिमि देहिं गृहीजन।
क्रव्य-भुजन कहँ क्रव्य देत तिमि गव्य अधिक रन॥
अगनित निषाद लै साथ मैं तिलक दिए बर माथ मैं।
नृप चल्यो बान भरि भाथ मैं लिए सरासन हाथ मैं॥ ६॥
चल्यो महीप बिराट धरे जय-चाट मगन मन।
सुजस बखानत बाट चलहिं बहु भाट गुनी गन॥
अमरराट् सम सुरथ राज भट ठाट प्रबल तन।
समर सत्रु उच्चाट करन कर काट बिचच्छन॥
घन रंग मतंग उतंग तन रथ तुरंग भट संग लै।
बर जंग रंग करिबे चल्यो मनहिं सुढंग उमंग लै॥ ७॥
बासुदेव नृप पौंड्र चल्यो हरि-रूप बनाए।
असित रंग रँगि अंग दारु-भुज दोय लगाए॥
संख चक्र अरबिंद गदा पीतांबर धारे।
कुंतितबासी बीर संग धनु तीर सुधारे॥

---

६ सव्य अपसव्य=बाएँ दाहिने कन्धेपर रखना। कव्य=पित्रादि को दिये अन्न जिससे पिंड आदि बनते हैं। क्रव्यभुज=मांसाहारी। गव्य=गाय से उत्पन्न।

७ अमरराट=इंद्र।

कलदार गरुड़ चढ़ि कोप मढ़ि उर अरि- हार बिचार गढ़ि ।
धर मार मार बहु बार पढ़ि लस्यो भूमि-भरतार बढ़ि ॥ ८ ॥

चल्यो असुर भगदत्त मत्त मातंग बैठिकै ।
अंग कवच कसि तंग जंग- हित मोछ ऐंठिकै ॥
जा बारन-तन देखि लाज पावत ऐरावत ।
पदन मरदि मद्र-सदन सत्रु सुरलोक पठावत ॥
तिमि लच्छ मतंगी स्वच्छ भट सरी निषंगी अति भले ।
रनरंगी अरधंगी-भगत भूपति संगी ह्वै चले ॥ ९ ॥

चल्यो अंग-अवनीस अंग-सित रंग धरे पट ।
परम सुढंग उमंग भरो कटि पर निषंग डट ॥
चहत जंग जदु संग करन तजि सर भुजंग ठट ।
बजत चंग मुख चंग भेरि मिरदंग जोर रट ॥
रथ पत्ति मतंग उतंग तन बहु तुरंग पर दंग कर ।
बरसा-रितु-गंग तरंग सम लसै संग चतुरंग बर ॥ १० ॥

चलेउ सुबेस नरेस बली जो बंग देस को ।
रन महेस अमरेस सरिस हित मागधेस को ॥
गहि कर केस हमेस परहि दायक कलेस को ।
बेस सेस रँग बसन तेज मोहत दिनेस को ॥

---

८ दारु=लकड़ी । अरविंद=कमल । कंतित=गंगा के तट पर मिर्जापुर के पश्चिम प्राचीन राजधानी थी ।

९ निषंगी=तूणीर धारण करनेवाला, धनुर्धारी । अरधंग=महादेवजी ।

तरवार सिरोही सोहती लाख सिकोही बोहती ।
जिमि सेना द्रोही जोहती लाज अरोही मोहती ॥११॥
चल्यो पत्र जय-पत्र धारि कालिंग वृत्र-बल ।
समर सत्र सरवत्र कीन जिहि करि इकत्र दल ॥
निरखि छत्रपति-छत्र हृदय लाजत नछत्रपति ।
सत्रु भजहिं अन्यत्र तत्र तें जत्र लखत अति ॥
गोमायु सुखद अरि-आयु हर आयुध भूषित वायु-बल ।
नरपति श्रुतायु चढ़तो भयो जिमि जटायु तकि तरनि थल ॥१२॥
भीष्मक भूप पवित्र चल्यो दोउ नित्र कमल जनु ।
अंबर चित्र बिचित्र लायकै इत्र धरे तनु ॥
रन-गिरित्र अरु वृत्र-सत्रु पुनि पित्र भूप सम ।
मागध-मित्र अमित्र दमन दुति मित्र रूप सम ॥
वैदर्भ भूप पंडित लस्यो दर्भ बान लै मारु पढ़ि ।
पर गर्भ-हरन संगर सभा अर्भ हरिहि गुन कोप मढ़ि ॥१३॥
चल्यो रुक्मिनी-बंधु रुक्म रथ चढ़ि भट रुक्मी ।
धरे बरम असि चरम परम बल दुस्सह हुक्मी ॥
कुंडिन देस-नरेस-सुवन भट भेस चतुर चित ।
चारि बाजि-युत सुरथ राजि अति गाजि आजि-हित ॥
बाजत निसान अति जोर सों सुनि निसान अरि-उर परत ।
पर को पिसान करिबे चढ़्यो सिर निसान बर फरहरत ॥१४॥
चल्यो क्राथ नरनाथ माथ परि मुकुट मनोहर ।
गरजि पाथनिधि सरिस हाथ धनु साथ सुभट बर ॥

मन तें बढ़ि रथ जात केतु फहरात बात–बस।
लखि लजात सुरतात बहुत बिख्यात जगत जस॥
सिर फिरत छत्र तासों गिरत निसिमनि-मनि जग जोवतो।
मनु मेरुसिखर चढ़ि चन्द्रमा उडुगन गहि महि बोवतो॥१५॥

बिंद नरिंद प्रधान चल्यो गोबिंदनगर पर।
गर मिलिंद के बृंद सहित अरबिंद माल बर॥
जिद सरिस रन रिंद चलत हलचल फनिंद ध्रुव।
मृगमद बिंद अनिंद सीस खामिंद हिंद भुव॥
गजदंती सुरथ सवार ह्वै दंती रथ हय लै सुमति।
हनुमंती करि अति गर्जना लस्यो अवंती अवनिपति॥१६॥

चल्यो तदनु अनुबिंद बिंदनृप-अनुज मनुज बर।
गहि कमान बर सान--हरन हर-धनु-समान कर॥
बैठि चक्रजुत सुरथ सक्र–सम बक्र नयन करि।
अति प्रवीन बलपीन तीन पुर मधि प्रताप भरि॥
उज्जैन भूप अरि जैन बर बुद्धि ऐन लै सैन सँग।
रन बिजै सैन मथुरा चढ्यो जदु दुख दैन सचैन अँग॥१७॥

---

१५ निसिमनि-मनि=चन्द्रमणि, रत्न विशेष, छत्र के लटकन से तात्पर्य है।

१६ फनिंद=शेष। ध्रुव=निश्चल। खामिंद=(फा० खाविन्द) पति, स्वामी। हनुमंती=हनुमान सा।

१७ तदनु=तदनन्तर, उसके पीछे।

चलेउ दरद जेहि फरद रचेउ बिधि मित्र-दरद-हर ।
सरद सरोरुह बदन जाचकन बरद मरद बर ॥
लसत सिंह सम दुरद नरद दिसि दुरद-अरद-कर ।
निरखि होत अरि सरद हरद सम जरद कांतिधर ॥
कर करद करत बेपरद जब गरद मिलत बपु गाज को ।
रन जुआन रद वित नृप लस्यो करद मगध महराज को ॥१८॥

अंसुमंत नरकंत चल्यो बढ़ि अंसुमंत छबि ।
कहै समंत दुरंत तेज मतिमंत कौन कबि ॥
दिसि परजंत अनंत ख्यात जस विजय तंत जिय ।
रथ दुदंत चलवंत बाजि गतिमंत संग लिय ॥
कर लै कृपान चमकावतो निरखि होहिं उपमान तनु ।
रवि-किरन कमल गहि नहिं तजत उझाकि चहति सो जान जनु॥१९॥

अंसुमंत-सुत चलेउ अपर जनु असुमंत--सुत ।
अंसुमत-दुति धरे हाथ अति अंसुमत-जुत ॥
संसुमंत रन करत परहि अवतंसु-मंत सिर ।
गंसुमंत बलवंत बिसद नृप-बंसुमंत थिर ॥

---

१८ दरद=एक जाति जो कश्मीर के उत्तर में बसती है, उस जाति का राजा । बरद=दानी । दुरद=हाथी । अरद=बिना दाँत का । करद=छुरा. कर देनेवाला ।

१९ अंसुमंत=सूर्य । संसुमंत=(स+अंसुमंत) प्रभायुक्त, तेजस्वी । अवतंसु-मंत=अलंकारयुक्त । गंसुमंत=वैरी, द्वेषयुक्त । दुदंत=हाथी ।

रथ हय दुर्दंत पैद्दर सहित बुधि अनंत सर कंत बर ।
गुनमंत गरजि हनुमंत सम चढ़ेउ चपल भगवंत पर ॥२०॥
चल्यो द्रुपद नृप बिसद घोर मद मत्त बीरबर ।
सँग पदचर हय दुरद हिये गद--बंधु-बैर धर ॥
चामीकर कर सुरथ विजय के अरथ बैठिकै ।
सजि मनि कवच किरीट मुदित मन मोछ ऐंठिकै ॥
करि नैन लाल बनि काल-सम धरि रन ख्याल निहाल उर ।
पंचाल-पाल तकतो भयो सत्रुसाल जदुपाल-पुर ॥२१॥
कैसिक चल्यो महीप नीप सम सीप रतन धरि ।
सात दीप नृपदीप छीप गति चहत समर सर ॥
हम दिलीप धनु टीप जासु पर-मद प्रतीप--कर ।
श्रोनित पीप नदीप रचत दुसमन समीप थर ॥
फहराति ध्वजा रथ के चलत धरनि धमाकि हहराति है ।
थहराति निरखि अरि-सैन जिहि डरि न पास ठहराति है ॥२२॥
चलेउ सुतर्वा गरबसहित तेहि परब सरब बल ।
अरब खरब भट संग खरब गुनि चित्त सत्रुदल ॥
चरब अरब जुत सुरथ बैठि रन करब आनि चित ।
सोचत मारब मरब जरब ते टरब नहीं कित ॥

---

२० चामीकर=सोना ।

२२ कैसिक=बडे केशोंवाला । छीप=वेग से । प्रतीप-कर=उल्टा करनेवाला ।

जदुनाथ बैर बिस्तारिकै मागध हित हिय धारिकै ।
भो लसत धनुष टंकारिकै निज दल हरष पसारिकै ॥२३॥

बेनु दारि नृप चल्यो सबै सिंगारि अंग तित ।
टोप सँवारि सुधारि कवच जदु हारि देन हित ॥
रन प्रचारिहौं पारि प्रलय तरवारि धारि सित ।
बल मुरारि महि मारि डारिहौं यह बिचारि चित ॥
गुल्लाला से लोचन करे माला दुख-मोचन गरे ।
रिसि ज्वाला अरि सोचन भरे भाला रन रोचन धरे ॥२४॥

आव्हृति चल्यो छितीस तीस लख लै नफीस दल ।
सुर अधीस बर कीस-केतु अरु ईस--सरिस बल ॥
द्विज असीस धरि सीस गुनिन बकसीस अरपि तित ।
उर अहीस जगदीस बैर रद पीस जुद्ध हित ॥
निज विजय गरज गरजत भयो सुनि लय घन लरजत भयो ।
कादरन मनहुँ बरजत भयो सूरन हित तरजत भयो ॥२५॥

उतमौजा नृप चलो भलो टंकारि सरासन ।
जासु सब्द सुनि डगत भयो बलनासन-आसन ॥
हीर जराऊ मुकुट सीस कंचन को सोहन ।
रवि-मंडल जनु जाल काटि बिधि धरे नखतगन ॥

---

२३ खरब=सौ अरब का एक खरब होता है, छोटा। अरब=अरबी घोड़ा।

२५ नफीस=(अ० नफ़ीस) अच्छा। लरजत=(फा०लरज़ीदन)काँपना।

रन परम बिचच्छन गरम तर धरम सुरच्छन करमकर ।
नृप लस्यो ततच्छन भरम-हर परम सुलच्छन बरम-धर ॥२६॥
युधामन्यु सह मन्यु चल्यो अभिमन्यु-जनक-बल ।
रथ तुरंग मातंग पत्ति चतुरंग संग दल ॥
खग्ग केतु फहरात करत जगमग्ग मग्ग महँ ।
कर उदग्ग बर खग्ग धरे दुति भरे नग्ग जहँ ॥
सोभा-निधान मतिमान भट तन धरि कनक समान पट ।
नृप बन्यो बिकट रन ठाट ठट करत कठिन धरु मारु रट ॥२७॥
चलेउ सुभेस नरेस छत्रधरमा सुचि करमा ।
बिसुकरमा-कृत सुरथ बैठि रव कंचन बरमा ॥
गर मानिक पन्नादि रतन धारे भट धरमा ।
बाढ़ी परमा परम मनहुँ लाला नाफरमा ॥
कोदंड चंड टंकारिकै धरि घमंड हँसतो भयो ।
ब्रह्मंड अखंड सुसब्द करि अरि-खंडन लसतो भयो ॥२८॥
बृहतछत्र नृप चलेउ बृहत दुख ढहत मित्र कर ।
मारु कहत जय चहत जीति जस लहत जुद्ध थर ॥
गहत धनुष अरि बहत त्रास तें पास रहत नहिं ।
महत गर्ब जो सहत सौंह सर दहत ताहि तहिं ॥

---

२६ बलनासन=श्रीकृष्ण ।

२८ लाला=(फा०) एक प्रकार का फूल । नाफरमा=(फा०) फूल विशेष ।

भट–पंक्ति–बिनासन की महा भक्ति धारि हिय बलमयो ।
जेहि आदि सक्ति सी सक्ति सो सक्ति धारि सोहत भयो ॥२९॥
चलेउ त्रिगर्त महीप अग्नि–संवर्त–सरिस रिसि ।
सीस छत्र आवर्त करत जनु नर्त चारि दिसि ॥
जब रन होत प्रवर्त रचत अरि हृदय गर्त नव ।
पर्त पर्त तन छेदि पुरावृत बैर–सर्त सब ॥
चढ़ि स्यंदन चंदन सीस दै बंदन करि द्विजवर–पदहि ।
नँदनंदनपुर तकतो भयो सुभट सुसर्मा धरि मदहि ॥३०॥
चलेउ मद्र महराज सुभट–सिरताज साज सजि ।
धनु दराज कर राज, निरखि जिहि जात गाज भजि ॥
देत परन कों लाज, बाज जिमि खगसमाज कहँ ।
आज करौं निज काज बोरि जादव–जहाज कहँ ॥
रन सल्य करन बर सल्य नृप चंड चाप टंकारिकै ।
बढ़ि लस्यो सूर दुति धारिकै मागध–हित निरधारिकै ॥३१॥

---

२९ बलमयो=बलवान । सक्ति=(शक्ति) परब्रह्म की सत्ता, बल, एक प्रकार का आयुध ।

३० त्रिगर्त=पंजाब प्रांत में जालंधर दोआब । संवर्त=घिरा हुआ । आवर्त=चक्कर, फिरना । प्रवर्त=(प्रवृत्त) तत्पर, लगा हुआ । गर्त=गढ़ा, यहाँ घाव से तात्पर्य है ।

३१ गाज=(गर्ज) दर्प । परन=शत्रुओं । सल्य = (शल्य) काँटा ।

चलेउ जयद्रथ भूप सुरथ चढ़ि जदुपुर-पथ पर ।
अकथ बीर जय-अरथ प्रगट पुरुषारथ सब थर ॥
स्वारथ हित करि सपथ बिरथ पर-बिक्रम करतो ।
मनमथ बल गुन प्रथम मृत्यु-नथ सम धनु धरतो ॥
दल सिंधु-सरिस लै सिंधुपति बिंधु-सारिस गौरव भलो ।
मदअंध लगाइ सुगंध तन जरासंध के हित रलो ॥३२॥
चल्यो भूप सौबीर रूप सोहत अनूपतर ।
बर बरछी करवाल ढाल लीने बिसाल कर ॥
चढ़ि अति चतुर तुरंग संग चतुरंग लिए दल ।
महत जंग को चहत अंग सित रंग बसन भल ॥
अरि-भीर पराति अधीर ह्वै जा सरीर-तसवीर सों ।
सौबीर लस्यो रनधीर जो लरत एक सौ बीर सों ॥३३॥
पौरव कौरव सरिस चल्यो बढ़ि गौरवसाली ।
चतुर तुरँग-जुत सुरथ उरग-धुज चढ़ि मनिमाली ॥
लाल बिलोचन करे भरे सर सों बर तरकस ।
गरे परे मनिहार धरे कर धनु रन-करकस ॥

---

३२ अकथ = जिसका वर्णन न किया जा सके । मृत्यु-नथ = काल के नाक में पहिरने योग्य नथ अर्थात् मृत्यु रूपी । रलो = चला ।

३३ सरीर-तसवीर = ऐसा दीर्घकाय तथा भयानक रूप है कि केवल उसके चित्र अर्थात् उसको देखकर ।

जेहि देखि सत्रुगन खलभलत चलत अखिल धरनी हलत ।
अति गराजि सरिसि निज कर मलत बढ़ेउ बली दंतन दलत ॥३४॥

चलेउ दसारन–भूप बिजय–कारन चढ़ि बारन ।
बिबिध प्रकारन सुजस करहिं चारन उच्चारन ॥
तमहि निवारन किए हृदय हारन को धारन ।
बान प्रहारन चहत वृषिन–सरदारन मारन ॥
धरु मारु पाठ करि धीर लै आठ दिसा भट भीर लै ।
अरि होहिं काठ जा तीर लै लस्यो साठ लख बीर लै ॥३५॥

चेकितान नरत्रान चल्यो बुधिवान सहित दल ।
चार दिसान निसान बजैं तनत्रान धरे भल ॥
ताल प्रमान महान लसै असमान लग्यो धुज ।
बर कमान अरु बान धरे करि–कर समान भुज ॥
द्विज अरपहिं आसिरबाद पढ़ि नमत तिन्हैं अहलाद–मढ़ि ।
नृप लसेउ सुरथ जय-स्वाद चढ़ि करत सिंह–सम नाद बढ़ि॥३६॥

---

३४ करकस = (कर्कश) कड़ा, कठोर ।

३५ दसारन=(दशार्ण) बुंदेलखंड का वह भाग जिसमें धसान (दशार्णा) नदी बहती है, उस प्रांत के राजा का नाम । वृष्णि=कृष्णजी । लै=लगाने से ।

३६ चेकितान=केकयराज धृष्टकेतु का पुत्र महाभारत में पांडवो के पक्ष में था । नरत्रान=राजा । तनत्रान=कवच । सोम–कांति=चंद्रमा के समान तेज । अनुलोम विलोम=नीच तथा उच्च श्रेणी वाले से । भोम=मंगल, लाल । आपधर=बादल ।

सोमक नृप बल–तोम चलेउ मुद सोम–कांति धारि ।
जो अनुलोम बिलोम लरत द्दग भोम बरन कारि ॥
परन करत रन होम जोम सों केतु ब्योम–तट ।
भोम -सरिस मनछोभ, खरे करि रोम भजहिं भट ॥
कर लिए चाप परतापधर, तीन लोक मैं थापधर ।
नृप गरज्यो जैसे आपधर, साँप धरन सम दापधर ॥३७॥

कोसल-नरपति चलेउ तबै रन–हित करि कौसल ।
अरि–उर सौ सल देत कला कौसल जानत भल ॥
बारन सुरथ सवार चारु सिर केतु अमलतर ।
बाजहिं भेरी झाँझ भन्यो दल माँझ शब्द बर ॥
असि चरम परम दुति–धरन कर रतन बने अगनित जरे ।
ससि बिज्जु मनहुँ दोउ दिसि बसत उडुगन को बखतर धरे ॥३८॥

चलेउ नग्नजित मोह मग्न रन अपर-भग्नकर ।
सोधि लग्न जय लग्न सहित असि धरे नग्न कर ॥
बर बारन असवारु चारु बखतर सुढारु तन ।
संग लसत चतुरंग करन रन-रंग समुद-मन ॥
मनि फूल रचित मखतूल की झूल न जाके तूल कोउ ।
सजि सोहेउ धारि दुकूल बर सूल सबै अरि सूल सोउ ॥३९॥

---

३८ सल=साल, कष्ट ।

३९ अपर=अन्य, शत्रु । लग्न=साइत, इच्छा । चतुरंग=चतुरंगिणी सेना । तूल=समान ।

चलेउ भूप गोनर्द वर्द-वाहन-समान बल ।
संग लिए बहु मर्द सर्द लखि हीन अपर-दल ॥
झुकता फेंटा सीस कंठ मुकुता की माला ।
सिर केसर को पुंड्र धरे पँचरंग दुसाला ॥
रथ चारु जराऊ सोहतो रूप सबन मन मोहतो ।
कसमीर-भूप भरि रिसि लसो मथुरापुर-दिसि जोहतो ॥४०॥
चल्यो पांड्य बरिबंड लिए कोदंड चंड कर ।
बर घमंड उर मंड बिसद ब्रहमंड धीर-तर ॥
रन अखंड अरि-खंड-करन मार्त्तंड-तेज-धर ।
अति उद्दंड भुज दंड मनहुँ जमदंड जुगल बर ॥
रथ ताजी बाजी सोहते राजी निज पथ जोहते ।
चढ़ि परघट सोह्यो अमर-बल जेहि लखि सुर भट मोहते ॥४१॥
कासी भूपति चलेउ प्रकासी विक्रम-रासी ।
कासीबासी संग हुलासी जुद्ध-बिलासी ॥
फाँसी लै रन फिरत सत्रु-नासी जिमि पासी ।
खासी मुख की कांति सूर-परभा सी भासी ॥
वृंदारकपति सो सूर अति अरि-संहारक बीरबर ।
नृप परम करम कारक लस्यो सर-धनु धारक धीरधर ॥४२॥

---

४० वर्द-वाहन=महादेवजी । झुकता=टेढ़ा ।

४१ ताजी=घोड़ों की जाति विशेष । अमर-बल=देवताओं के समान बलवाला ।

४२ पासी=वरुण । वृंदारकपति=इन्द्र ।

चलेउ सुर-द्रुम-सरिस जसी द्रुम बिद्रुम दृग रँग ।
फेरत बान कमान, कनक तनत्रान धरे अँग ॥
मंडल सम कोदंड फिरत अति सोभा पावत ।
बिबि कर गहि जनु चक्र सक्र-पति बक्र फिरावत ॥
सिर चपल पताका फरहरै, छत्र सलाका थरहरै ।
रथ राजत चाका धरहरै पर--परजा का घर हरै ॥४३॥
चलेउ किंपुरुष-भूप पुरुषगन लै भयमोचन ।
सोच न पर-भट भिरत टरत करि मद-संकोचन ॥
लोचन लाल बिसाल रुषित जनु प्रलय-त्रिलोचन ।
समर-बिरोचन-तुल्य सीस मनरोचन रोचन ॥
नरपाल ढाल करवाल गहि मगध-पाल-हित चाहतो ।
भो लसत भरत-दुति सकल महि भरत-सरिस बल बाहतो ॥४४॥
चलेउ सैव्य बर भट्ट नट्ट सम चपल पट्ट कर ।
करत समर धरु रट्ट झट्ट झुरमट्ट सरन कर ॥
सह झपट्ट सरपट्ट दौरि दहपट्ट करत अरि ।
सँग विकट्ट दल-ठट्ट मुरैं देवहु निपट्ट डरि ॥
रथ बर बिराजि छबि छाजिकै साजि साज घन गाजिकै ।
नृप लसेउ जासु दुति देखि रवि भाजि जात नभ लाजिकै ॥४५॥

---

४३ बिद्रुम=मूँगा । बिबि=दो । सक्रपति=विष्णु ।

४४ किंपुरुष=मनुष्यों की एक जाति, जंबूद्वीप का एक खंड जो हिमालय तथा हेमकूट के बीच में है । रुषित=देखते हुए । प्रलय त्रिलोचन=प्रलय कालके महादेवजी ।

चलेउ सुंभ नृप संभु-सरिस लोचन कुसुंभ रँग ।
कनक-कुंभ-जुत सुरथ चढ़यो जल भरो कुंभ-सँग ॥
सुंभ--निसुंभ--निकुंभ--कुंभ--सम बिक्रम--करता ।
कुंभकरन रव अंग अंभनिधि-सम धुनि धरता ॥
तरवारि लिए बर बारि की सुरपति-पवि अनुहारि की ।
नृप बढ़ेउ परम ताकत घरे ताकत पुरी मुरारि की ॥४६॥
चलेउ बिदेह सुदेह हृदय हरि-नेह बसाए ।
जरासंध बल-अंध सैन सन बंध मिलाए ॥
मूरध ऊरध पुंड्र दिए अघ-झुंड छीन-कर ।
गोपीचंदन-छाप-तिलक मधि ताप तीन हर ॥
उर लसी सुतुलसी-मालिका हुलसी सुमति रसालिका ।
नृप लस्यो बरद करवालिका समर भयद जिमि कालिका ॥४७॥
चलेउ भूप रवि अच्छ अच्छ निज अच्छ लाल करि ।
दच्छ जरासुत पच्छ स्वच्छ मनि मुकट सीस धरि ॥
लच्छ-रथी-अध्यच्छ प्रबल प्रत्यच्छ बिचच्छन ।
कसे कच्छ निज सैन रच्छ करि पर-बल-भच्छन ॥

---

४६ कुसुंभ=कुसुम जिसका रंग लाल होता है । कुंभ=पहिया, घडा । अंभनिधि=समुद्र । सुरपति-पवि=वज्र ।

४७ अच्छ=पवित्र, आँख, अच्छी तरह ।

चढ़ि चित्रित सुंड भुसुंड पैं सोभित कंचन कुंड पैं ।
नृप सजेउ चलत जदु-झुंड पैं जिमि गज मृग-सिर पुंड पैं ॥४८॥
मालव-भूप उदग्ग चलेउ कर खग्ग जग्ग-जित ।
तन सुभग्ग आभरन मग्ग जगमग्ग नग्ग सित ॥
अति अडग्ग रन रुचत अग्ग इव अड़ि उमग्ग सों ।
अरि-सिर करत अलग्ग पग्ग नहिं फिरत अग्ग सों ॥
बल-कंदन लै सुखमा छयो चंदन को टीको दयो ।
नँदनंदन-बैरहि चित ठयो स्यंदन चढ़ि सोभित भयो ॥४९॥
छागलि चलेउ समद्द भूप बलहद्द जद्द अति ।
रद्द दाबि रद छद्द कद्द दीरघ बिसद्द मति ॥
अरि-मुख करत जरद्द रद्दगन करि मरद्द बर ।
जिमि बन दलत दुरद्द पद्द सों हैं दुखद्द तर ॥
छबि-रासि निकासि कृपान कर सूरज-सरिस प्रकासिकै ।
नृप लसेउ नासि संसय सकल निज दल बीच बिलासिकै ॥५०॥
चलेउ भूप पुरमित्र मित्र-दुति मगध-मित्र मन ।
पट पवित्र मनि चित्र सहित मलि इत्र धरे तन ॥

---

४८ कच्छ=कच्छ देशके घोड़े, लाँग । कुंड=हौदा ।

४९ नग=नग, नगीना । बल-कंदन= सेना नाश करनेवाला ।

५० जद्द=प्रबल प्रचंड । रद्द=रद, दाँत । कद्द=(क़द) डीलडौल । जरद्द=(फा० ज़र्द) पीला । मरद्द=तोड़कर । दुरद्द=(द्विरद) हाथी ।

दस-सत-नित्र गिरित्र पित्रपति वृत्र-सरिस बल ।
समर चरित्र बिचित्र करन नासन अमित्र-दल ॥
कर भाला हाला-सरिस फल पुर-पंकज पाला बनो ।
उर माला लाला रंग दृग नँदलाला-जय-पन ठनो ॥५१॥
नृप कुसांब रिसि जरत चल्यो नहिं डरत टरत रन ।
मारु मारु उच्चरत सरत करि हरत सत्रुपन ॥
करत चाप-धुनि जबै जलधि थरथरत भरत नभ ।
परत सेल अरि मरत हृदय भय धरत अमर नभ ॥
ऐसो पराक्रमी बीरबर तैसो लीने तीर कर ।
वैसो रथ सोहेउ धीरधर जैसो नभ तम-भीरहर ॥५२॥
कैतवेय नृप चल्यो श्रेय गुनि बल अमेय तन ।
सँग अजेय सैनेय सैन पर प्रान तेय रन ॥
कार्तिकेय राधेय गिरा-पितु-धेय-चरन अरि ।
चाप लेय जय देय हितन सम बैनतेय लरि ॥
मतिमंत महा छितिकंत-मनि चढ़ि द्विदंत सुरकंत सम ।
भगवंत नगर-पथ पर फढ्यो गरजि घोर हनुमंत-सम ॥५३॥

---

५१ दस-सत-नित्र=सहस्र नेत्र वाले इंद्र । गिरित्र=महादेवजी । पित्रपति=(पितृपति) यम ।

५२ सरत=शर्त, प्रतिज्ञा । नभ-तम-भीरि-हर=सूर्य ।

५३. अमेय=असीम, अपरिमित । कार्तिकेय=षड़ानन ।

सतधन्वा नृप चलेउ सार्ङ्गधन्वा-पुर ताकिकै।
चतुर तुरँग-जुत सुरथ बैठि धरु धरु यह बकिकै ॥
कर लीने कोदंड चंड उर-मधि घमंड अति।
तेजमंड मार्त्तंड-सरिस अरि-खंडकरन-मति ॥
फहराति ध्वजा असमान मैं छत्र नछत्र-नरेस-सम।
टहराति नमति चल गति निरखि छजेउ छत्रपति अपर जम ॥५४॥
चलेउ पंचनद-पंचबदन बल कर धरि खंजर।
समर सत्रु-दल-बीच करत अबिरल सर-पंजर ॥
सोहत सुरथ सवार चारि दिसि सैन-समुंदर।
फरहरात बर केतु बन्यो मधि गज अति सुंदर ॥
कुलजात, रूप उत्तम सबै, जातरूप-भूषन धरे।
नृप लस्यो लरन-हित स्याम सौं बिजय काम मन मैं करे ॥५५॥
पर्वतीय-नरपीय अनामय, चलेउ महाबल।
धरे घोर रिसि हीय लिए सँग दरसनीय दल ॥
कहि नाहिं जाय प्रताप दाप तिहुँ लोक रह्यो भरि।
परभट निरखि सदाहि जाहि असु चाहि जाहि टरि ॥
बर टाँगन पै असवार जो टाँगन नभ आँगन चढ़त।
हरि सौं रन-माँगन बढ़ेउ नृप साँगन धरि धरु धरु पठत ॥५६॥

---

५४ सार्ङ्गधन्वापुर=मथुरा। नछत्र-नरेस=सूर्य।

५५ पंचनद=पंजाब। पंचबदन=सिंह। कुलजात=वंशोद्भव। जातरूप=सोना।

५६ नरपीय=राजा। अनामय=स्वस्थ। साँगन=हथियार।

बैदिस चलेउ महीप प्रभा सों पूरि सर्ब दिसि ।
निसिनायक सो छत्र धरे एकत्र हृदय रिसि ॥
सुंदर सोना सुरथ परम पथ परमा छावत ।
घोरे जोरे चार चाल मन-गतिहि लजावत ॥
कर गहे गदा बलधर सदा देत परन रन आपदा ।
नृप चतुर लस्यो बनि काल-सम कस्यो मुरेठो सह अदा ॥५७॥
वामदेव नृप चल्यो देवबर वामदेव-बल ।
जरासंध नरदेव भेव गुनि मति अमेव भल ॥
धरे कटारी हाथ मित्र-सुखकारी भारी ।
पर-भयकारी साथ सुरथ हय गय पद चारी ॥
रन करत लटू को करम रथ होत छ टूको सत्रु-डर ।
नृप बन्यो पटू को मकुट-मनि कमर पटूको बाँधि तुर ॥५८॥
बल-निकेत साकेत चल्यो निज बिजय-हेत बढ़ि ।
प्रेतराज-सम समर खेत पर प्रान लेत चढ़ि ॥
अंबर सेत समेत अंग कर बेत फिरावत ।
जाहि देत सर ताहि चेत गत रेत गिरावत ॥
रथ आठ-तुरग-जुत सोहतो जेर काठ पर रतन बर ।
भट साठ सहस सँग लै लस्यो पाठ करत धर मार धर ॥५९॥

---

५७ अदा=(अ०) भाव, टेढ़ी ।

५८ वामदेव=महादेवजी । अमेव=असीम, बेहद । पटूका=कमरबंद ।
तुर=शीघ्र । ५९ अंबर=वस्त्र ।

चलेउ सिनीपति बिदित धीर धरनीपति अति मति ।
संगर-रति जिहि बसत, सदा जय पावत पर-प्रति ॥
रन-धरती सति भरत सत्रु हति हति उर बर धृति ।
मन-गति सुरथ सवार फबति सँग हय-गज-पंगति ॥
रति-रवन-दवन सम बल-भवन बड़े रथी नति करहिं लखि ।
नरपाल बिपति-मोचन लख्यो जरासंध-हित हीय रखि ॥६०॥
चित्रसेन नृप चल्यो सेन-सह सूरसेनपुर ।
झपटि चलै जिमि सेन लेन जै देन चैन उर ॥
ससि-मनिमाली-बीर तीर-धर अति बलसाली ।
कर करवाली सोह जथा काली बिकराली ॥
धुज नभ सों छोटो नेक नहिं भ्रम सों भेटो नेक नहिं ।
नृप रच्यो अखेटो दल किए कसि बर फेटो कमर महिं ॥६१॥
चलेउ कुनिंद नरिंद धरे अंबर अनिंद तन ।
रन पसिंद भट-बृंद लिए जिमि रुद्र जिंद-गन ॥
उर अमंद आनंद दंदगत जाहिर जग मैं ।
आनन चंद-दुचंद प्रभा पूरत पग पग मैं ॥

---

६० रति-रवन-दवन=महादेवजी ।

६१ सूरसेन-पुर=मथुरा ।

बिक्रम-समुंद रन दुंद कर गुन अकुंद गुन-कुंद-गर ।
नृप चढ़ो लरन-हित तुंद बल मथुरा नगर मुकुंद पर ॥६२॥
चलेउ सुदाच्छिन दच्छ समर, जुध-दच्छिन दाच्छिन ।
दाच्छिन-दिसि-पति-तेज ततच्छिन गुनि बिधि दाच्छिन ॥
पर-पच्छिन-असु हरत बरच्छिन बक जिमि मच्छिन ।
लीने जच्छिन-जच्छ-रच्छ पल-भच्छिन पच्छिन ॥
बर कानन कुंडल, कुंड सिर, रथ बितुंड के झुंड सँग ।
रनरक्त रक्त-जुत महि करन सोभित लोचन रक्त रँग ॥६३॥
उल्मुक चलेउ महीप लिए उल्मुक से सर बर ।
सुंदर सुरथ सवार चार दिसि सुभट चापधर ॥
बाजत भेरि निसान कांति बाढ़ी दिसान अति ।
सत्रुन करत पिसान हृदय करिकै निसान सति ॥
पँचरंग अंग अंबर फबत लखि सावन-संझा टरी ।
उर मोतिन की माला परी मेरु सिखर जिमि सुरसरी ॥६४॥

---

६२ अमंद=जो मंद अर्थात् धीमा न हो, तेज। दंद-गत=लड़ाई झगड़ा में। दुचंद=(फा०)दूना। अकुंद=(प्र०अ+फा०कुंद) अकुंठित, मंद नहीं। गुन+कुंद+गर (सं० गुण+सं० कुंद+फा० गर) गुणो का पहाड़ बनानेवाला। तुंद=(फ़ा०) तेज, प्रचंड।

६३ जुध-दच्छिन=(युद्ध+दक्षिण) लड़ाई के अनुकूल, लड़ाका। दाच्छिन=निपुण। दच्छिन-दिसिपति=यम। पर-पच्छिम=शत्रु के पक्षवाले। पल-भच्छिन=मांस खानेवाले। कुंड=लोहे की टोपी।

६४ उल्मुक=अंगारा।

कैरव भैरव-सरिस चले वसु भैरव रव कर।
नीति पढ़े रिसि मढ़े बढ़े रन चढ़े सुरथ पर॥
करन लिए कोदंड चंड भट-मंडल-मंडित।
अति उदंड भुजदंड करत बरिबंडन खंडित॥
दुति-जाल-सहित दिनपाल से लोचन कंज बिसाल से।
नरपाल लसे दिगपाल से अति कराल रन काल से॥६५॥

कैकय भूप अनूप चले बढ़ि पाँचहु भ्राता।
चढ़ि चढ़ि जान सुजान समर सर सृष्टि बिधाता॥
सीस केतु फहरात निरखि थहरात सत्रुगन।
रथ अति रव घहरात हिए ठहरात मोह घन॥
कर बीच धारि तरवारि बर सीस किरीट सुधारिकै।
नृप लसे रारि निरधारिकै मागध बिजय बिचारिकै॥६६॥

चलेउ सदल सहदेव मनहुँ सह-देव देवपति।
बल अमेव तन एव जनक को भेव जानि सति॥
कर कमान बर बान-सहित पर-प्रान-निकासन।
चलत सुरथ पथ परम चारि दिसि भरत प्रकासन॥
कटि बनी असि अति सोहनी देति जौन जय बोहनी।
सुरराज-गाज मनमोहनी सैलसिखर बिच मोहनी॥६७॥

चलेउ मनुज-सिरताज सुबल गंधार-राज बर।
करत दराज अवाज बाज जिमि खग-समाज पर॥

---

६५ भैरव=भयानक।

६७ सह-देव=देवताओं के साथ। प्रकासन=प्रकाशों।

मगधराज हित काज लिए गजराज-बाजि-नर ।
लखि सुरराज ससाज होत सह-लाज सरग थर ॥
परिकिर जयदाता कटि कसो पर जय नाता लखि नसो ।
दुरजोधन-मातामह लसो मनिमय छाता सिर बसो ॥६८॥
सकुनी चल्यो नरेस तबै बर बेस बनाए ।
बल बिसेस अमरेस-सरिस भ्रम लेस बहाए ॥
कर कंचन कोदंड चंड ब्रह्मंड बिदित जस ।
हृदय घमंड अखंड बसत दसमसतक के अस ॥
गंधार-धरापति-सुत सुभग मगधराज-हित रसरसो ।
भट सौबल सौबल संग लै जंगरंग करिबे लसो ॥६९॥
चलेउ उलूक अचूक लिए बंदूक सजग चित ।
रन-अमूक अरि टूक करन मागध-सलूक-हित ॥
चढ़ि सुंदर हय-जुक्त सुरथ पथ परमा छावत ।
चलत जलद जव धारि जलद-रव भय उपजावत ॥
सँग बावन सहस रथीन लै बावन-बंधु-समान बल ।
भरि चावन पृथिवीपति लस्यो रावन-सुत सों चतुर भल ॥७०॥
लिए अनेक अनीक चल्यो वाल्हीक बीरबर ।
नखत-ईस-सम छत्र सीस उसनीस मनोहर ॥

---

६८ गजराज-बाजि-नर=हाथी तथा घोड़ों की सवार और पैदल सेना।

६९ सौबल=बलवान ।

७० उलूक=उलूक देश का राजा कितव का पुत्र । अमूक=प्रवीण, चतुर । परमा=शोभा । जव=वेग । चावन=उत्कट इच्छा, लालसा ।

खग्ग निसित सित केस असित दिसि करत सरन सों ।
छत्र-बंस सरवत्र लेत जयपत्र परन सों ॥
अति क्रोधन रन सोधन सदा अरि-बल-रोधन-पन किए ।
दुरजोधन-प्रपितामह लस्यो सहसन जोधन सँग लिए ॥७१॥
सोमदत्त भरि जोम चलेउ भट सोम-बंस-बर ।
पुलकि रोम बल-तोम महत मुद रोम रोम धर ॥
कौरव-कुल-सिरताज मनुज-महराज दीह-पन ।
करत दराज अवाज राजपथ राजि माजि तन ॥
कर चाप सदा पवि राजतो निरखि सक्र-धनु लाजतो ।
सँग दीह नगारो बाजतो चतुर चतुर दल गाजतो ॥७२॥
चलेउ भूरि दल भूरि लिए नभ पूरि धूरि सों ।
बिजय लेत अरि पूरि सरन मद चूरि दूरि सों ॥
परम सूर दुति-सूर सुभग मग भरत नूर सों ।
संग तूर-रव पूर भैम जूझन जरूर सों ॥
बर कुरुनाथ-भ्राता बिदित गुरू-साथ बिद्या पढ़्यो ।
सिर उरू हाथ हरता समर गुरू माथ हरपुर चढ्यो ॥७३॥

---

७१ अनीक=सेना । निसित=लोहा, तीक्ष्ण । असित=काला ।

७२ दीह-पन=जिसकी प्रतिज्ञा बड़ी या दृढ़ हो । दीह=दीर्घ, बड़ा ।

७३ भूरि=बहुत, सोमदत्त के एक पुत्र का नाम । सूर=वीर, सूर्य । नूर=(अ०) प्रभा, प्रकाश ।

चल्यो तवा सो तप्त दवा–दुति भूरिश्रवा भट ।
सुधा–श्रवा सिर छत्र हवा जब सुरथ नवा पट ॥
संग सवा लख सेन सेन अरि लवा रवा कर ।
समर सत्रु रुजग्रस्त ध्वस्त मन मित्र दवाकर ॥
सँग कलस पंच पल्लव भरे पंच रतन जामैं जरे ।
भट लस्यो पंचमुख बलधरे रन परपंच उदै करे ॥७४॥
चल्यो प्रबल सल बीर अमल पट कमल फवै गल ।
लै दल पैदल सुरथ बाजि हैकलधर मैगल ॥
समर अछल अरि पटकि पुहुमि तल रचत रहित कल ।
करत अचल कुल चपल पलहि रन सर पुल करनल ॥
गत दूषन दूषन–बंधु–रव तन धरिकै भूषन नयो ।
दिसि बदन–मयूषन सों भरत कुरु भूषन लसतो भयो ॥७५॥
चलेउ सरासन लिये दुसासन करि बीरासन ।
त्रासन–नासन–सत्रु सदा अति दुस्सह सासन ॥
गरुड़ासन पैं करत रुसित हासन भरि गाँसन ।
ज्वलित हुतासन सरिस भरत परकासन आसन ॥

---

७४ भूरिश्रवा–सोमदत्त के पिता वाल्हीकराज का नाम ज्ञात नहीं हुआ। यह पुत्र सोमदत्त, पौत्र भूरि और दौहित्र भूरिश्रवा के साथ में आए थे। सुधाश्रवा=अमृत बरसानेवाला। पंचमुख=सिंह।

७५ मैगल–(मदकल) मस्त हाथी। दूषन–बंधु=खर।

मुख पुरबी बीरा खायकै गुरबी मति गहि मद-सनो ।
रन सुर बी जासों डरहिं सो उरबी-पति-नन्दन बनो ॥७६॥
चले सरब तेहि परब सुजोधब बंधु गरब भरि ।
समर सरब से चरब शस्त्र सत परब सरिस धरि ॥
अरब खरब अरि खरब करन बल परब सिंधु रव ।
जरब लिये चढ़ि अरब मारिबो मरब ठानि जिव ॥
कर लीने बान कमान गन कीने सान महान तन ।
रसभीने ज्ञान-निधान पन चले सुजान प्रधान रन ॥७७॥
चकवरती नृप चलेउ अखिल जग जा बसवरती ।
जय मति टरती परहि पासवरती लखि सरती ॥
जिमि बरती सब विश्व एक सिखि-दुति सों बरती ।
तिमि सब धरती-पतिन मध्य प्रभुता बर बरती ॥
रन सूर सूर दस लच्छ दुति स्वच्छ छत्र सिर पर फिरत ।
परतच्छ जच्छपति-सरिस रथ जगमग नग नहिं दृग थिरत ॥७८॥
कानन कुंडल धरे हाथ सोहत धनु बानन ।
सीस मुकुट मधि हीर धरे जिमि बिधु पंचानन ॥

---

७६ गरुड़ासन = विष्णु ।

७७ परब = (पर्व) समय, गाँठ । परब-सिंधु = पूर्णिमा का ज्वार से बढ़ा हुआ समुद्र । चरब = (फा० चर्ब) तेज, तीक्ष्ण । जरब = शस्त्र । अरब = घोड़ा ।

किय दस दिसि तम दूरि भूरि भूषन तन आनन।
रन-कानन-मृगराज सरद-राका-ससि-आनन ॥
उर हार जराऊ सोहते कवि सुर गुरु दुति मोहते।
लखि मित्र अनन्द अरोहते सत्रु सदा दुख जोहते ॥७९॥
मुरछल चारहु ओर अमल बहु भृत्य फिरावहिं।
सूरमुखी मनि-जटित अनेकन सोभा पावहिं ॥
चामीकर के दण्ड सहित चामर छबि छावहिं।
धवल बिजन बहु नवल सुजन मन सम दरसावहि ॥
सबही दिसि सब बाजे बजैं दल लखि सब राजे लजैं।
मन दुसमन भय साजे भजैं कर धनु सर ताजे तजै ॥८०॥
लाखन चले भसुंड सुंड सों नभ तल परसत।
कोटिन रथ पथ पूरि भूरि जिन पैं भट हरसत ॥
चले तुरगगन मगन पगन रव रवि ज्यों बरसत।
मनुज दनुज से बीर तीर जुत धनु करि करसत ॥
असि, प्रास, कटार, कुठार, पवि, तोमर, चक्र, गदा, छुरी।
कुरु-भट्ट चले आयुध धरे सघन घटा मानहुँ जुरी ॥८१॥
चहूँ ओर अवनीस घने घेरे छबि छावैं।
महाराज कों शत्रु-घात सों सजग बचावैं ॥

---

८० सूरमुखी = सूरजमुखी, एक प्रकार का झंडा जिसके सिरे पर पत्राकार बड़ा तिकोना होता है जिसके बीच में सूर्य का आकार बना रहता है। चामीकर = सोना। बिजन = पंखा।

चक्र रच्छ रन दच्छ बन्धु दुर्मुख विकर्न दोउ ।
करन सरिस रन करन परन के प्रान-हरन सोउ ॥
दुरजोधन बर जोधन लिये निज जय सोधन मन दिये ।
भो चलत बिरोधन फनि हिये रन हित क्रोधन मन किये ॥८२॥

जाचक देहि असीस सीस नीचो करि करिकै ।
तिन कहँ दै बकसीस दिये घर धन भरि भरिकै ॥
मंत्र पढ़हिं द्विज स्वच्छ हाथ अच्छत धरि धरिकै ।
तिनहिं देत बहु दान सबन के पग परि परिकै ॥
दधि तंदुल लाजा फूल फल पूँगी फल श्रीफल घने ।
सँग मंगल को महराज के सजल सपल्लव घट बने ॥८३॥

चलत सुजोधन कटक हलत किल बिकल सकल महि ।
कच्छप भारन छपत नाग चिकरत फुकरत अहि ॥
हलचल थल थल अचल उछलि जलनिधि जल हहरत ।
भूरि गई भरि धूरि गगन रवि नूरन ठहरत ॥
लखि सडर होत निरजर मुकुट चकित हंसबाहन तकै ।
जग बीच भयो अस कौन कवि जो कुरु दल छबि कहि सकै ॥८४॥

चलेउ जरासुत क्रोध जरा मनि जरा जान चढ़ि ।
जरा लखत रन धरा शत्रु दल जाति जरा मढ़ि ॥
हरा नाथ के हरा हेत पर गरा गिरावत ।
सुजस चराचर भरा चहत रन करा अदावत ॥

बाराह-केतु फहरात सिर राह चाह जय की धरत।
भट-नाह घने घेरे बने सह उछाह जय जय करत ॥८५॥
राजी राजै सुरथ चार बर बाजी ताजी।
जिनकी गति लखि बिलखि हिए मनकी गति लाजी।
फिरत छत्र सिर सेत गिरत अमृत की बूंदैं॥
चकचौंधी अति होति जोति सों जन दृग मूँदैं।
घुँघुरू घंटा घन घन बजहिं झाँझन मिलि झन झन करौ॥
घन शब्द सकल भुव सुनि परै राजपथ्थ रज सों भरो ॥८६॥
कर लगाम ले सूत धूत मजबूत बिराजत।
देखि वृहदरथ पूत सुरथ सूरज--रथ लाजत॥
बन्दी मागध सूत सङ्ग मागध गुन गावत।
अगल बगल बहु मनुज मोरछल चँवर डोलावत॥
मुखतेज सहस दस मण्डली बुधि दस सहस कमंडली।
नृप चहूँ ओर सोहति भली मण्डलीक की मंडली ॥८७॥
जगमगात नृप गात बरम बर परम सुहावन।
गरे मनिन के हार परे सब भेर प्रभा घन॥
एक एक नग देखि अनेकन उड़गन वारिय।
बसत मनहुँ सिसुमार चक्र तन इमि निरधारिय॥

---

८५ जरा = जला हुआ, जड़ा हुआ, थोड़ा, वृद्धता।

८७ मागध = भाट, जरासंध का एक नाम, जो उसके मगध का राजा होने के कारण रूढ़ि सा मान लिया गया है।

जम, बरुन, सक्र से सूर सँग सहसन सोभा छावते ।
पर दलन अपरमित बलधरन जरासंध जस गावते ॥८८॥

द्विजन बिजय हित दियो मुहूरत आनँद पूरत ।
जीति जरूरत लख्यो ताहि लै बनि जय मूरत ॥
क्रूरत करि रिसि जबहिं होति सत हर–सम सूरत ।
थूरत पर बल भूरि हृदय महँ पूरि गरूरत ॥
दै दान सहित सनमान बहु उर गुमान अतिही लयो ।
मद अंध कंध कोदण्ड धरि जरासंध चलतो भयो ॥८९॥

जेते भूप अनूप रूप बलवंत गनाए ।
तिन सबको सरदार हृदय रन प्यार बसाए ॥
दनुजराज कुरुराज मित्र तन इत्र लगाए ।
आयुध संग अनेक अनेकन सकट भराए ॥
सब शस्त्र बिसारद अस्त्रवित बिदित बली-मनि जगत जित ।
जदु बिजयकरन गुनि उचित चित चल्यो मगन तित लरन हित॥९०॥

चलत मगध महराज राजगीरि–नगर—निवासी ।
भाषहिं जयजयकार देखि प्रभु–प्रभुता खासी ॥
बरसावहिं दधि, दूब, दरिद्रा, लवा, बतासा ।
मोदक, कंचन–रतन–फूल–फल चारहु आसा ॥
पुर–नारि अटारि अरूढ़ ह्वै रहीं निहारि अपार दल ।
मगधेस–बिजय जस गावहीं सकल सुहावनि कंठ कल ॥९१॥

---

८८ सिसुमार = (शिशुमार) विष्णु ।

भर्‌यो राजगिरि राजपत्थ राजन के दल सों।
नहिं पिपीलिका निकरि सकै जामहँ कोउ कल सों॥
भर्‌यो व्योम धुज छत्र पताका अरु कलसन सों।
गयो सबै अवकास रह्यो सुररथ बिलसन सों॥
सब सैन भरी भट तमक सों धरनि भरी पग धमक सों।
देह भरी नग चमक सों जिमि घन अति पवि दमक सों॥९२॥
समर सूर भरपूर इंदुमनि की उर माला।
मंगल साजे साज संग बुध बीर बिसाला॥
कर उठाइ गुरु गदा बिदित मृगपति सम बल अति।
जगतगुरू सों जुद्ध हेत अति क्रुद्ध मंदमति॥
उर रन उछाहु जय चाहु बर राहु फबत रथ मनिमयो।
नृप कोल केतु खग केतु पुर बिजय हेतु चलतो भयो॥९३॥

[दोहा]

इहि बिधि सह सेना लस्यो मागध–भुव–भरतार॥
निरखि चकित सुर चक्कवै थकित सूर तिहिं बार॥ ९४॥

[कवित्त]

भयो भूरि भार धरा चलत जरा–कुमार
करत चिकार चार दिग्गज सहित सोग।
'गिरिधरदास' भूमिमंडल मरमरात
अति घबरात से परात हैं दिसन लोग।
परम बिसेस भार सहि ना सकत सेस
एक सिर ब्रह्म अंड सहस धरन जोग।

लटकि लटकि सीस झटकि झटकि चित
अटकि अटकि और पटकि पटकि भोग ॥९५॥

[दोहा]

परम भार कच्छप छपत थरथरात बाराह ॥
मगध-नाह चलतो भयो भटभीरन भरि राह ॥ ९६ ॥

जरासंध-निर्याणं नाम तृतीयः सर्गः

४. सर्ग

[चौंपाई]

चलत जरासुत असगुन भारे। भये हारि के अरपनहारे ॥
सनमुख पवन धूरि दृग झोंकै। मानहुँ समर जात तिहि रोकै ॥१॥
नभगत केतु सुरथ को भारी। गिरो धरनि पर अनरथकारी ॥
कढ़े केतु ग्रह तिमि तन गदलो। सो मनु केतु केतुसों बदलो ॥२॥
राहु परब बिनु रविहि प्रचारा। दिन महँ प्रगट भए बहु तारा ॥
घन अँगार बरसहि दुखदाता। रुधिर बिंदु बोवत मनु धाता ॥३॥
रथ पैं गिद्ध आयकै बैठो। रोवत खर-दल सनमुख पैठो ॥
बोलहिं मारजार अरु स्यारी। हारहुगे मनु कहत पुकारी ॥४॥
दिसा दाह देखत नरराजा। छुभित नदिन सह सिंधु बिराजा ॥
बनमैं रूख सूख हर हर ते। मनु नृप सूख बरूथन कर ते ॥५॥
गिरि के शृंग लसैं महि गिरिकै। जावहिं मृगा बाम दिसि फिरिकै॥
कमल बिना बो बने जलासय। प्रगटत मनहुँ हारि को आसय ॥६॥

[दोहा]

भूमि कंप बिबरन दिसा रवि ससि प्रभा-बिहीन।
आयुध भट-कर तें गिरैं खग मृग बोलहिं दीन ॥ ७ ॥

[सोरठा]

इमि अनेक उतपात भए श्याम-पुर जात तहँ।
तिहि न गिन्यो नर तात समर सूर बिख्यात भुव ॥ ८ ॥

---

३ धाता = ब्रह्मा।

[चौपाई]

मागध चलेउ समर चित दीने । बिबिध बैद पंडित सँग लीने ॥
जय साइत को लसे जोतिसी । जिनकी मति दिन-दीप-जोति सी॥९॥
बहुत जराह जरासुत संगी । घायल देह करहिं जे चंगी ॥
कैसिउ पीर होइ तन कोउ थल । हरै ताहि जिमि अघ सुरसरि जल १०
बूटी जड़ी मनी बहु बिधि की । लीनी बिथा निवारन सिधि की ॥
बिबिध-गुनी—समाज सँग सोहै । मूरख बिन नृप कटक लसो है ११
पेसराज बेलदार हजारन । चले संग धरि कंध कुठारन ॥
करहिं बराबर नृप—पथ भारी । जिमि पंडित गुरु मत अनुसारी १२
काटत पर्वत जंगल झारी । पाटत बिबिध नदी नद भारी ॥
ठाम ठाम आराम बनावहिं । जे आराम सबहि बरसावहिं १३
मीठे बहु फल फूल लगावहिं । सामग्री सब लाय जुहावहिं ॥
कूप तड़ाग रचावत जाहीं । जिमि नृप-दल दुख पावै नाहीं १४
बर छिरकाव होत मग मग मैं । दमकत अति सुगंध पग पगमैं ॥
रज ते रहित राजपथ सोहै । जिहि लखि सुरपुर-पथ उर मोहै १५

[दोहा]

जहँ जहँ नृप-दल जात है सागर सरिस अपार ।
तहँ तहँ लागति जाति है बिबिध प्रकार बजार ॥१६॥

---

१० जराह = जर्राह, अस्त्रवैद्य ।

१४ जुहावहिं = इकट्ठा करते हैं ।

[चौपाई]

घने बने चित साफ सराफा । जे धन सों धन करहिं इजाफा ॥
बहु बज्जाज साज निज साजे । अंबर लै लै अवनि बिराजे १७
घृत मधु मीठो मिरिच सुपारी । बैठ रसनि पसारि पसारी ॥
अन्नन की अति रासि लगाई । राजे बनिक धनिक अधिकारी १८
बर दुकान पकवान मिठाई । लसे साजि हलुवा हलुआई ॥
दरजी किते तिते धन गरजी । ब्योंतहि पटु पट जिमि नृप मरजी १९
बने जौहरी सहित जवाहिर । जाहिर जोति होति मति माहिर ॥
गंधी की दुकानं है न्यारी । मनु दमकै सुमनन की क्यारी २०
हेमकार, हक्काक, कसेरे । जड़िया, मीनाकार, चितेरे ॥
बहु रँग पट रँगरेज पसारे । लखि सावन-संझा-घन हारे २१
रजक, लोहार, कोहार, तमोली । बेचहिं रस अहीर मृदु बोली ॥
कुँजड़े, खटिक बने बहु माली । पुनि मेवाफरोस गुनसाली २२
बढ़ई, संगतरास, बिसाती । सिकलीगढ़, कँहार की पाँती ॥
सौदागर बहु बस्तु सजाए । जिनहिं देखि सुर-सदन लजाए २३

---

१७ इजाफा = (अ० इज़ाफ़ः) बढ़ाव, बढ़ती । बज्जाज = जो कपड़ा बेंचता है ।

२० माहिर = (फा०) पूर्ण ज्ञाता ।

२१ हक्काक = (अ०) नगीना बनानेवाला ।

२३ सिकलीगढ = (अ० सैक़लगर) धातु के सामान की मैल दूर करने वाला ।

तारकसौं, अत्तार घनेरे । जोलहा पुनि कलवार, लेहेरे ॥
इनहिं आदि औरो सब फिरके । दल सँग हाट लगावहिं थिरके २४
जहँ जहँ जात राजगिरि-राजा । तहँ तहँ राज बसत जनु ताजा ॥
को कहि सकै भूप-परतापहि । जेहि लखि आचरजित बिधि आपहि

[दोहा]

सुन्दर ठाम दिखाय जहँ जल फल फूल समेत ।
सेनापति–मति सों तहाँ मग मैं डेरा लेत ॥२६॥

[चौपाई]

जहाँ भूप उतरत गतसंका । तहाँ प्रथम बजवावत डंका ॥
मानहुँ छेत्रपाल कहँ राजा । उतरन खबरि देत दै बाजा ॥२७॥
बहुरि गुलाब केवरा नीरन । छिरकावत महि अति बिस्तीरन ॥
पुनि कपूर चंदन सो चरचत । मनु पृथ्वीपति पतिनी अरचत २८
तहँ फर्रास सबै तिहिं बेरा । खड़े करहिं भूपन के डेरा ॥
मानहुँ महल संग सब आए । खड़े होहिं नृप आयसु पाए ॥२९॥
चोप ओपधर लसहिं अथोरी । तनी चहूँ दिसि रेशम डोरी ॥
चारु कनात बनात बनाई । तने बितान घटा मनु आई ॥३०॥
सोभाधर मखमल की पालैं । जिनमैं बनी दुरद मनि जालैं ॥
मनु बहु बरन चारि धर माहीं । बकुलन के कुल बहु दरसाहीं ॥३१॥

---

२४ फिरके = (अ० फ़िरक़ः) व्यवसायियों का समूह।

३० चोप = चोब, डंडे जिनके सहारे खेमे आदि खड़े किए जाते है ।

तीन चार खंडन के डेरा । इक इक को कोसन को घेरा ॥
परदा परे लसत अधिकाई । सुभग सुमन टट्टी मनु लाई ॥३२॥
इहि बिधि तनहि नृपन के तंबू । चोब सीस चमकहिं बहु तंबू ॥
बसत सिबिर मधि मगध, अंध-सुत।जिमि उडुगन माधि रबिससि छाबिजुत
बड़े बड़े जोधा धनुधारी । रच्छहिं घूमि सिबिर सुखकारी ॥
मनहुँ सूर मंडल अनुमानी । करहि प्रदच्छिन मिलि बहु ज्ञानी ३४
इहि बिधान निसि रहहिं सुखारे । करहिं कूच उठि बड़े सबारे ॥
नित्य कृत्य करि नृप सुख रलते । चढ़ि रथ बिजय अरथ पथ चलते

[सोरठा]

जिन्ह राजन को राज आवत मग मगधेस के ।
ते सब नृपहिं ससाज पहुनाई बहुबिधि करहिं ॥३६॥

[चौपाई]

सदल नृपहिं मन्दिर लै जावैं । बिबिध बिनय नय सहित सुनावैं ॥
मानहिं निजहिं धन्य हरषाए । मनु ईसान आप घर आए ।३७।
मंगल साज सजावैं नगरी । सगरी करैं राज-सामगरी ॥
सूर उग्र दुति दुनिया पूजित । समुझि अरघ अरपहिं नति कूजित ३८
कनक सिंहासन आसन मंडित । तापर बैठावहिं बिधिपंडित ॥
जथा जोग सब राजहिं राजा । राजत सुर-समाज जिमि ताजा ३९
मुरछल चँवर बिजन बहु करते । मृदु कहि राह परिस्रम हरते ॥
छिरकि गुलाब ताप कहँ नासैं । साधु संग सम सुख परकासैं ४०

---

३३ अंधसुत = धार्तराष्ट्र दुर्योधन ।

३७ ईसान = महादेवजी ।

भोजन की भारी तैयारी। करहिं समारि कटोरा थारी ॥
मेवा मोदक बिबिध मिठाई । जा मधुराई सुधा लजाई ॥४१॥
असन बाद बीरे बहु देहीं । एला मेलि ताहि नृप लेहीं ॥
पान खात मुख लाली भासत। उर को मनु अनुराग निकासत ४२
ध्रुवपद, ख्याल प्रबंध अनेकन । गावहिं गायक सहित बिबेकन ॥
लखि सामान सबन मन तूठो। यह सत दिवि नभ को दिवि झूठो ४३
चारबधू नाचहिं मृदु अंगी । संग ताल तबला सारंगी ॥
कहि न जाय छबि कवि-मति भंगी। चपला मनहुँ करति गति सगी
इहि बिधि मग के नृप हरषाई। करहिं मगधपति की पहुनाई ॥
खिलत मिलति तिनकों नरपति सों। जिमि बर देत अमर बर रतिसों

[दोहा]

तिन सब सों पूजित परम जरासंध अवनीप ॥
सदल अदलधर जात भे मथुरा नगर समीप ॥४६॥
तहाँ जाय या बिधि परहु घेरि घेरि पुर सर्व ॥
जामैं कोउ भागैं नहीं जादव मति के खर्व ॥४७॥

---

४२ एला = इलायची ।

४५ खिलत = (अ० ख़िलअत) वे वस्त्र जो राजाओं से दूसरों को दिए जाते है ।

सुनत हुकुम सब दल परयो मथुरा के चहुँ ओर ॥
बनद-बृंद घेरयो मनहुँ सैल सिखर बरजोर ॥४८॥
उतरे डेरन बीच नृप निज निज सैन सजाय ॥
बाजन लागी दुन्दुभी बढ़यो बीर उर चाय ॥४९॥

जरासंध मथुरा-गमनं नाम चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥

---

४८ बनद = मेघ, बादल ।

५-सर्ग

[जयकरी छंद]

सुनि सो शब्द सकल पुर लोग। आए लखन सैन गत सोग ॥
जरासंध दल सिंधु–समान। देखत अखिल नगर घबरान ॥१॥
तेहि छन दूत धाय द्रुत जाय। उग्रसेन सों कही बुझाय ॥
निज दल सों सजिकै सब साज। आयो लरन मगध-महराज ॥२॥
सुनिकै जरासंध आगौन। लग्यो मनहिं सोचन जदुरौन ॥
जौं पहिले घर आयो मंद। तौ इत होय अवसि दुखदंद ॥३॥
सुनि सँग राम स्याम लै भूप। चढ़ेउ अटा देखन दल–रूप ॥
दुहुन बीच सोह्यो नृप पर्म। नर नारायण सँग जिमि धर्म ॥४॥
तहाँ लिए जदु भट बलऐन। लग्यो भूप देखन पर–सैन ॥
जिमि घन घेरत रवि चहुँ ओर। तिमि उतरे जोधा सब ठौर ॥५॥
जेते बड़े बड़े नरनाथ। ते सब लखे मगध नृप साथ ॥
सिन्धु मध्य लघु दीप समान। पर–दल मधि निज पुर दरसान॥६॥

[दोहा]

जरासंध नृप अंध–सुत पास पास आसीन ॥
कनककसिपु कनकाच्छ जिमि दनुजन मैं बल पीन ॥ ७ ॥

---

६ दीप = द्वीप, टापू।

[सोरठा]

इमि लखि मागध सेन नलिन–नैन धरि चैन चित ।।
कहत राम सों बैन सजल जलद जिमि मधुर धुनि ।। ८ ।।

[रोला]

प्रथमही रन–अतिथि आयो जरासुत यह तात ।
उचित है सतकार करनो यासु करि दल घात ।।
जायहै जो मगध पूजित जथा बिधि निज गेह ।
आपु की करिहै बड़ाई नृपन सह धरि नेह ।। ९ ।।
जौ निरादर जाय ग्रह तौ धरै जादव नाम ।
करिय तातें सजग ह्वै सँग सत्रु के संग्राम ।।
भूमि कों अरु जरासुत कों नृपन को इक काल ।
भार बिन संभार बिन मद बिन करिय जदुपाल ।।१०।।
मागधादिक नृपन तजिकै दल करिय संहार ।
बचैं तो फिर जाय लावैं सैन चार प्रकार ।।
बहुरि तिनकों मारिये तजि पतिन को सिद्धान्त ।
सहज इमि महि–भार झोंकिय भार मैं अहिकांत ।।११।।
जरासुत सो और कोउ नहिं मिलै मोहिं दलाल ।
जो करै सौदा समर की सहज इमि या काल ।।

८ नलिन–नैन = कमलनयन कृष्णजी ।

११ पतिन = सेनापति, राजाओं ।

कहाँ लौं भुव भट्ट कहँ हों बृंद खोजन खासु।
सधै मागध मारफत यह काज श्रम बिन आसु ॥१२॥
एक औरहु है नफा हम सफा कीन बिचार।
रफा संगहि होय सब महिपाल को रन प्यार ॥
जिते बलधर जितैहैं याको जिते सों तात।
जथा जाने तत्त्व के सब मत सुलभ व्है जात ॥१३॥
भयो मन-इच्छित अबै कटि कसहु सह आनंद।
तुरत उरवी-भार उतरै मुद लहैं सुर-बृंद ॥
कहत इमि हरि बंधु हरषे निरखि पर-दल-ओर।
पसुन लखि जिमि बढ़ै भूखे सिंह के तन जोर ॥१४॥

[दोहा]

प्रमुदित लखि दोउ बीर को अभय भैम-भरतार।
समर चह्यो मगधेस सों समर सत्र व्यापार ॥१५॥

[सवैया]

जीतहुँगो दल मागध को मन मैं गुनिकै घन के सम गाजो।
संग लिए 'गिरिधारन' राम अटा तजिकै उतरो बल ताजो ॥
जायकै राज-सभा मधि मैं चढ़ि हेम सिंहासन यों नृप भ्राजो।
मंदर कंदर अंदर ज्यों मृग जूथ पुरन्दर आय बिराजो ॥१६॥

---

१२ अहिकांत = बलरामजी जो शेषनाग के अवतार थे।

१३ रफा = (अ०) दूर।

[सोरठा]

करि सब सभा इकत्र उद्धवादि से बुद्धिधर।
बोल्यो नरपति छत्र छत्र–बंस को हंस बर ॥१७॥

[चौपाई]

जरासंध संगर हित आयो। संग सबै धरतीपति लायो॥
सुख महँ यासु आगमन कैसो। दाल भात महँ मूसर जैसो ॥१८॥
उचित यासु निग्रह अब भाई। नतरु बात जदुकुल कै जाइ॥
जथा रोग आगम तन हेरी। बुध न करहिं औषध मैं देरी १९
स्याम राम संमति यह कीनी। चहिय समर करि कीरति लीनी॥
यादव रन महिमा महि गाई। तप, रन, धन, नाति माहि बड़ाई२०
तासों तुम सब सूर सुलच्छन। कहहु मंत्र अब उचित बिचच्छन॥
जीति हारि मम तुम नाहिं दूजे। मूर्ति होय सुर दसके पूजे॥२१॥
इमि सुनि नृप–बचनहिं जदुबंसी। बोले हँसि बंसीधर अंसी॥
हम सब प्रजा चलहिं नृप-राजी। जथा सूत प्रेरित रथबाजी २२
रन-हित नृप आयो धनु कूजी। अब कि सलाह लरन तजि दूजी॥
समर-बिमुख छत्री जग कैसे। दिन–ससि अहै तेज–हत जैसे २३

[दोहा]

हरि–बल सों जदुकुल अभय लरिहैं रिपु सों जीति।
सिंह गोद गत अजहिं जिमि नहिं बृकादि सों भीति ॥२४॥

---

२२ राजी = आज्ञा, प्रसन्नता।

सुनि पुनि नरपति ने कह्यो सजहु साज सानन्द ।
प्रात चढ़ैंगे सत्रु पर जिमि बलि पैं सुर बृंद ॥२५॥
इमि आज्ञा दै सबन को उग्रसैन बलऐन ।
भटन बिदा करि रैन-मुख जाइ कीन्ह गृह सैन ॥२६॥

यदु-मंत्र-वर्णनं नाम पञ्चमः सर्गः ॥ ५ ॥

६—सर्ग

[कवित्त]

सोर तमचोर को अथोर फैलो चारों ओर
दुरी तमसैन ज्यों कुमति बुध-दंडिता ।
कंज कैदखाने सों निकलि चले अलि-बृंद
पति दोसादोस सों सरोस भई खंडिता ॥
'गिरिधरदास' कहै सकुची कुमोदिनी यों
देखि परपुरुष लजात जैसे पंडिता ।
बरुन-अरुनताई छाई छिति छोरन लौं
बिंब लौं तरनि बिंब प्राची करी मंडिता ॥ १ ॥

[दोहा]

प्रात समय नरपाल उठि किय नित कृत्य सचाय ।
अपर अरक सम मगधपति सभा प्रकासी आय ॥ २ ॥
नृपन बीच ऐसो लसो राजगिरि को कंत ।
जैसे राजत गिरिन में रतन सानु दुति-वंत ॥ ३ ॥
तहँ अपनी सैना लखी सादर नृप बल पीन ।
बादर सी गाजे सघन कादर नर सों हीन ॥ ४ ॥

---

१ तमचोर = कुक्कुट, मुरगा । खंडिता = वह नायिका जिसका नायक रात्रि अन्य स्त्री के साथ बिताकर सबेरे उसके पास आवे और वह उसपर क्रोध करे । बरुन = बारह आदित्यों में एक का नाम, सूर्य । बिंब = मंडल, गोलाकार घेरा ।

नृप मंत्रिन सों मंत्र करि लीनो दूत बुलाय ।
रावन सनमुख सुक सरिस खरो भयो सिर नाय ॥ ५ ॥

[सवैया]

रूप की रूपनिधान अनूप अँगीठी नई गढ़ि मोल मँगाई ।
ता मधि पावक पुंज धरयो 'गिरिधारन' जामै प्रभा अधिकाई ॥
तेज सों ताके ललाई भई रज मैं मिली आसु सबै रजताई ।
मानो प्रबाल की थाल बनाय कै लाल की रास बिसाल लगाई ॥६॥
ढाँकिकै पावक दूत के हाथ दै बात कही इहि भाँति बुझायकै ॥
भोज भुआल सभा महँ सनमुख राखिकै यों कहियो सिर नायकै ॥
याहि पठायो जरासुत नै अवलोकहु नीके अधीरज लायकै ॥
पुत्र खपायकै नातिन पायकै जीहौ जै पायकै कौन उपायकै ॥७॥

[दोहा]

सुनत चार तिहि हाथ लै गयो भैम-दरबार ।
बासव ऐसे कैक सब जहँ बैठे सरदार ॥ ८ ॥

[अरिल्ल]

जाय जरासुत दूत भैम-पति-पद परयो ।
देखि जराऊ जगह हिए संभ्रम भरयो ॥
जगत-जरावन द्रव्य-पात्र आगे धरयो ।
सोच जरा है अभय हाल बरनन करयो ॥ ९ ॥

---

६ रूप = रूपा, चाँदी की ।

८ भैम = राजा उग्रसेन, यदुवंशीय ।

सुनि बिहँसे जदुबीर जीत की चाय सों ।
हँसि बोले गोबिंद कहहु यह राय सों ॥
उचित ससुर-पन कीन छत्रकुल-न्याय सों ।
चढ़ी दमाद सहाय सुता की हाय सों ॥ १० ॥

[सोरठा]

इमि कहि द्रुत गहि चाय आप आप सिखि मैं दियौ ।
तुरतहि गयो बुझाय ज्ञान-पाय मन भ्रांति जिमि ॥ ११ ॥
बिदा कियो नृप दूत सर मैं सर को अंक करि ।
निरखि बृहदरथ-पूत सबन सहित कोप्यो अतिहि ॥१२॥
हरि-बुधि बृहत बिचारि भीष्महु भाष्यो मागधहि ।
जदु महँ प्रगट मुरारि सुर महँ बामन लौं चतुर ॥१३॥

[सवैया]

कारज आपुनो सिद्ध करै सब मंत्र को जोर अनेक प्रकार को ।
मोह ते सत्रु उचाटै तुरंत बसी करै सिद्ध सँकल्प बिचार को ॥
जापर मारन हेतु चलै असु तासु तजै द्रुत देह अधार को ।
या छन तूलता और सबै इक जादू जदू महँ भेद अकार को॥ १४ ॥

[चौपाई]

इमि सुनिकै बिदर्भ-पति-बानी ।
हँसत भयो मागध अभिमानी ॥
ताछन बढ़्यो कोलाहल भारी ।
जिमि घन नदत प्रलय भयकारी ॥ १५ ॥

तब नृप चह्यो हुकुम निज करनो ।
मौन होहु सब या विधि बरनो ॥
कह्यो चोपदारन सों सासन ।
मनु मुख-बंद मंत्र किय आसन ॥ १६ ॥
ता छन मौन भए सब प्रानी ।
कोउ प्रकार की कढ़ै न बानी ॥
शब्द बिना सोह्यो दल कैसे ।
मूक सिंधु राका को जैसे ॥ १७ ॥

[दोहा]

तब गरज्जि गंभीर धुनि जरासंध मद-अंध ॥
सभा बीच बोलत भयो धरे सरासन कंध ॥१८॥

[चौपाई]

करहु आसु अरि बिजय तयारी । घेरहु चहुँ दिसि नगरी भारी ।
रन रसज्ञ जे बीर बड़ेरे ! मम सँग चलहु बरम सम घेरे १९
युद्ध भूमि खनि खनि सम कीजै । जा महँ इतकी सैन न छीजै ।
बेलदार हज्जारन धावैं । अरि उछाह-सह नगर ढहावैं २०
तेरि फोरि घर घरन कँगूरे। गोपुर चूर करैं गृह रूरे ।
चढ़ैं बीर सोपान लगाई । घन उँचाहि जिमि पवन सहाई ॥२१॥
भरि बारूद सुरंग लगावैं । पुरी सहित जदु भटन उड़ावैं ।
तोप--कितार कोपसों लावैं । चोप धरे गोले बरसावैं ॥ २२ ॥

---

२१ गोपुर = किले का फाटक ।

[दोहा]

जब लौं गोप-कुमार दोउ मैं न करौं गत प्रान।
तबलौं नासहु पुर सबै त्रिपुर जथा भगवान ॥२३॥

[सोरठा]

कहँ बल मोर अपार कहँ कुमार द्वै गोप के।
होइ कि मारत बार बहु बाघन बिबि गज--सुतहिं ॥२४॥

[छप्पय]

मद्रक, सुंभक, पनस, किंपुरुस, द्रुम, नृप कोसल।
सोमदत्त, वाल्हीक, भूरि सह भूरिस्रवा, सल ॥
युधामन्यु, गोनर्द, अनामय पुनि उतमौजा।
चेकितान अरु अंग, बंग, कालिंग, महौजा ॥
नृप बृहतछत्र, कैसिक सुहित, आहुति सहित भुआल सब।
चढि लैरं द्वार पश्चिम जबर अरि पश्चिम गति देन ढब ॥२५॥
मित्रबिंद, अनुबिंद, द्रुपद, सतधन्वा, पौरव।
बेनुदारि, रवि अच्छ, बिदूरथ पूरो गौरव ॥
सोमक, भीष्मक, सकुम बहुरि रदबक्र, पंचनद ॥
चित्रसेन, सौबीर, सिंधु, पुरुमित्र धरे मद ॥
छागलि, कुसांब, मालव सहित भूप कुनिंद, बिराट सँग।
चढ़ि देहिं समर उत्तर परन उत्तर द्वार मचाय रँग ॥२६॥

---

२४ बिबि = दो।

सकुनी, सुबल, उलूक, सैव्य, भगदत्त, सुसरमा।
एकलव्य, साकित, सिनीपति बिश्रुतकरमा॥
साल्व, सुतर्वा, क्राथ, सुदच्छिन, जनक, दसारन।
कैतवेय, कासीस, छत्रधरमा अरिमारन॥
बैदिस, उल्मुक अरु नग्नजित अंसुमान नृप सुत सहित।
लै बामदेव पूरब चढ़ैं समर अपूरब करन हित॥२७॥
सुत समेत दमघोस, दरद, सब कैकय, कैरव।
कौरवपति सत बंधु समर-पंडित जिमि भैरव॥
इन कहँ लै सुत-सहित जात हम दच्छिन द्वारे।
होत परन के ग्राम लखहु जादव द्रुत मारे॥
जिमि मूल कटे तरु नहिं रहत पत्र पुष्प साखा सबै।
तिमि बल हरि के बिध्वंस सों नास होत मथुरा अबै॥२८॥

[दोहा]

आज्ञा दै सब न्रृपन को इहि बिधान नर-त्रान।
सदल चढ़्यो माथुरा नगर घन रव हनत निसान॥२९॥

[सोरठा]

चहुँ दिसि बीर कदंबु सिंहनाद करि करि जबर।
भए बजावन कंबु करी मनहुँ संगर खबर॥३०॥

मथुरारोधनं नाम षष्ठः सर्गः॥ ६॥

---

२७ भैरव = महादेव, अष्ट भैरव।

३० कदंबु = समूह, झुंड। कंबु = शंख।

७-सर्ग

[दोहा]

इमि पुर को अवरोध लखि लै जदु भट बलवन्त।
उग्र सैन सजिकै चल्यो उग्रसैन छितिकंत ॥ १ ॥

[छप्पय]

उद्धव चले बिसुद्ध जुद्ध हित उद्ध धनुष धरि।
रुद्ध सर्प से क्रुद्ध हियो मागध बिरुद्ध करि ॥
मंत्री मध्य प्रधान सेत परिधान जान चढ़ि।
तन तनत्रान महान बीरता सरस सान मढ़ि ॥
जौ जरा जरासुत पायहौं जरा जरा करि नायहौं।
रन-धरा गरा धर भिन्न करि जिव जम लोक पठायहौं ॥ २ ॥
सुफलक जयहित चल्यो सुफल करिबे रन कारज।
सुबरन सुरथ सवार बृद्ध बपु जदुभट आरज ॥
जैसो जम को दण्ड तथा कोदण्ड लिए कर।
सत्रु पिसित के छुधित हाथ अति निसित धरे सर ॥
गर ज्यों बिसाल रव सैन मैं बिजय लैन को चैन धरि।
मनु करि--दल लख करि बृद्ध हरि नादि उठ्यो कंदर निकरि ॥ ३ ॥

---

३ पिसित = (सं० पिशित) मांस। निसित = तीक्ष्ण।

चल्यो सूर अक्रूर बली मसहूर रंग मैं।
मागध बिजय जरूर सूर-सम नूर अंग मैं॥
उर गरूर भरपूर करन अरि चूर जंग मैं।
फबी दूर करपूर-धूर सी महक संग मैं॥
बर सीस धुजा फहराति है छन छबि लौं छहराति है।
लखि सत्रु सैन हहराति है डरन भरी थहराति है॥ ४॥
जंग हेत आसंग चलेउ दल संग सजाए।
गंग सरिस सित रंग अंग अंबर झलकाए॥
उर उमंग अरि दंग करत सब ढंग सुहाए।
कसि निखंग चतुरंग लिए भुव भंग बनाए॥
अक्रूर-अनुज रन-सूर-बर असि काढ़ी मनि म्यान सों।
मनु इंद्र-धनुष ते बीजुरी कढ़ी कटीली सान सों॥ ५॥
सारमेय सरदार चलेउ पर पार करन बढ़ि।
सुफलक सुभट कुमार 'मार धर' बार बार पढ़ि॥
हिय मनिहार सुढार चार हय सहित सुरथ चढ़ि।
निसित धार तरवार धारि जिय जय बिचार मढ़ि॥
सिर चारु चमर मुरछल फिरत छबि भाषत सब कवि मुरहिं।
जनु जमुना गंग तरंग बर बल सागर दुहुँ दिसि ढुरहिं॥ ६॥
चलेउ मृदुर उर कोप पूरि सुर सरिस बहादुर।
कढ़ि पुर तें बर चतुर चतुर हय-जुत रथ चढ़ि तुर॥
प्रचुर भयद रनधीर धरमधुर जदुभट ठाकुर।
जिमि मुरदर तकि असुर कंध धरि धनु कर सर छुर॥

उर माल नखत मनमोहनी जाल मनिन की सोहनी ।
सँग सह जयछोह अछोहनी रन थल पर-बल-बोहनी ॥ ७ ॥
मृदुजित सित पट धारि चल्यो जदुपति हित रातो ।
कर चामीकर चाप कमर परिकर दरसातो ॥
स्याम कोस मधि खग्ग करत काढ़त रन रस रत ।
मनहुँ राहु ससि कला कंठ निगलत अरु उगलत ॥
रन जरासुतहि गहि लायहौं मारि धरातल नायहौं ।
हर हरा हरा भष रस भरा आजुहि अवसि बनायहौं ॥ ८ ॥
गिरि सी गरुता धारि चलेउ गिरि गिरिधर-हित चहि ।
थिरि रथ पर भिरि दुंदु लेत जस घिरि जेहि रन महि ॥
कनक दंड कर छत्र फिरत अस सोभा पावत ।
मनु रवि कर बिधु हृदय छेदि रहि रथहि फिरावत ॥
अक्रूर अनुज अति क्रूर मति भरि गरूर भरपूर मन ।
भो लसत सूर अरि-तम--दमन मुदित भोज-अंभोज-गन ॥ ९ ॥
धरमवृद्ध धरि बरम चल्यो रन करम बिचच्छन ।
गुनि छत्रिन को धरम भरम गत परम सुलच्छन ॥
खग्ग चरम को चरम खग्ग कर सत्रु-मरम-हर ।
धरम अनुज बलधरन धरम कर सरिस गरम तर ॥

---

७ तुर = जल्दी, शीघ्र । मुरदर = मुरारि, श्रीकृष्ण । सर-छुर = (सं० शर-क्षुर) वह बाण जिसकी नोक छुर के समान तेज हो ।

उर माल कोस लौं श्री दिपति मेघ—सरिस भैरव नदत ।
हिंडोल होत लखि सत्रु हिय जदुकुल–दीपक जै बदत ॥१०॥

चलो सुकर्मा बीर भलो अम्बर तन धारे ।
मलो करहिं भरि क्रोध हलोरन नद बहु बारे ॥
कर कंचन-कोदण्ड फिरत दृग थिरत न जोहत ।
गहि फेरत रवि कला कमल जनु ऐसे सोहत ॥
सब खलक बिदित सुफलक–सुवन गरभी गरज बनेस सों ।
इमि लसत भयो परमामयो रथ पर बैठि दिनेस सों ॥११॥

छत्रापेक्ष्य प्रचंड चल्यो सँग सैना लीने ।
समर धीर पर पीर–करन रन मैं मन दीने ॥
धनु बिजुरी चमकाय बानजल बरषि अमोलो ।
गरजि जलद सम जलद सूर सावन यह बोलो ॥
मगधेस संग जे नृप अहैं तिनहिं जंग महँ मारिकै ।
मैं देत आज जदुराज कहँ बिजय साज निरधारिकै ॥१२॥

अरिमरदन रनधीर चल्यो संग लै बर मरदन ।
पर अरदन बिख्यात समर नाहर सम नरदन ॥
सूर सुकर्मा अनुज भर्‍यो अंबर दल गरदन ।
अरिमरदन मैं कहत कंबु सम सोहति गरदन ॥

---

१० खग्ग = तलवार, बाण । मालकोस, श्री, मेघ, भैरो, हिंडोल और दीपक छ रागों के नाम इन दो पंक्तियों में लाए गए हैं ।

११ खलक = (फा०) संसार । बनेस = सिंह, वरुण । परमा = शोभा ।

मुख हँसत लसति दसनावली अधर पान लाली भली।
जिमि बंधुक मैं मुक्तावली संपुट की आभा रली ॥१३॥
चल्यो सूर सत्रुघ्न रतन भूखित अलबेला।
दुहुँ दिसि सुभट कतार चारु सोहत है बेला ॥
बल अगाध जल, लसत चर्म कच्छप, असि मच्छी।
चित्त तरंग तरंग उठत जय हित बहु अच्छी ॥
उर रिसि बड़वानल चंड अति बान व्याल सोभित घनो।
जल चक्र चक्र धनु नक्र धरि सुफलक-सुत सागर बनो ॥१४॥
गंधमाद रन स्वाद चल्यो घन सरिस नाद करि।
लै द्विज आसिरबाद परम अहलाद हृदय भरि ॥
अलकावलि मुख दुहूँ ओर अति सोभा छाई।
मनहुँ कमल रस लेन जुगल भ्रमरावलि आई ॥
जगमग्ग करति मग मग्ग मैं सोभा पवि सी खग्ग मैं।
भट लस्यो मढ़ तन नग्ग मैं जाहिर जा जस जग्ग मैं ॥१५॥
चल्यो प्रबल प्रतिबाहु बाहु बर अंगद धारे।
भरि उछाहु भट-नाहु राहु-रथ-धुनि बिस्तारे ॥
सीस जड़ाऊ कुंड लगे जामहँ नग भारे।
लसत मनहुँ चढ़ि बसत चंदमंडल पै तारे ॥

---

१३ अरदन = दु:ख देना। नरदन = गर्जना। बंधुक = लाल रंग का दुपहरिया का फूल।

१४ बेला=किनारा।

अरि अजा-जूथ पै सेर हौं बल-धन-धरन कुबेर हौं ।
इमि कहत चल्यो तहँ महत बल सुफलक को सुत तेरहों ॥१६॥
मागध सों धरि दंभु संभु सम चल्यो संभु रन ।
धरे मुकुट बर सीस ससी-कुल-जसी मुकुट धन ॥
तृपुर-बिजय-करतार अंग राखी दुति उज्जल ।
जय मय आसा बास हिये जय मित्र प्रेम भल ॥
बर भोगी भूषन को धरे पंचानन बिक्रम अधिक ।
हिय सूल करत जासों लरत प्रगट समर दुसमन बधिक ॥१७॥
आहुक नामक बीर चल्यो बढ़ि संगर करकस ।
चाप चढ़ाए चारु कसे चामीकर तरकस ॥
फबति पीठ पर ढाल कालिमा बरनि न जाई ।
मनहुँ छत्र की छाय फिरनि सों अति गहिराई ॥
कटि माहिं असी सुंदर लसी बिमल बीरता हिय बसी ।
इमि सज्यो ससी-कुल को जसी लखि पर-जय-आसा नसी ॥१८॥
सिनि स्यंदन चढ़ि चलेउ लाइ चंदन जदुनंदन ।
शत्रु-निकंदन रूप प्रगट ब्रज-भूप अनंदन ॥
फंदन परि भट जद्द करहिं जाको पद बंदन ।
कश्यप-नंदन-सरिस लसत मुख किरिन अमंदन ॥
कछु नहिं कहि जात प्रताप बल जग जाहिर कोदंडधर ।
सब बिधि अजेय रन बिष्नु सम मित्र-सोक-हर रूपबर ॥१९॥

---

१६ अंगद = बिजायठ, एक आभरण । कुंड = लोहे की टोपी ।

सात्यकि चलेउ सजोर निकसि निज सेन ठोर सों।
जदु-सिरमौर अथोर बली अधिकी करोर सों॥
करत घोर रथ सोर जटित मनि कीर मोर सों।
पर-असु-चोर कठोर लखत रन ओर तोर सों॥
भट परसुराम-सम सत्रुदर, राम-सरिस सतवाक पर।
बलराम-सरिस सुचि सुजसधर उर उछाह रनविजय कर ॥२०॥
सत्यक चलेउ प्रचंड चंड कोदंड सुधारत॥
उर घमंड बरिबंड करन अरि खंड बिचारत।
दुति अखंड मार्त्तंड सरिस ब्रह्मंड पसारत॥
अति उदंड भुज दंड, गंड कुंडल छबि धारत।
जो नर-पुर अरि सों समर करि सुर-पुर प्रान पठावतो॥
जाको सर पर-उर छेदि पुनि होइ नागपुर आवतो ॥२१॥
पृथु पृथु बिक्रम चलेउ भूप पृथु सम जय धरता।
रन करता बर बीर धीर भैमन को भरता॥
बुद्धिमंत दुतिमंत तंत जय मय निरधारत।
गुन अनंत जदु-कंत-सखा अरि अंत बिचारत॥
सिर सासन धरि जगदीस को संग लिए बलभद्र अति।
रति रली सुभद्रा समर की लसेउ सुदरसन बिमल मति ॥२२॥

---

२० तोर = झोंक, आवेश। सतवाक = सत्यवादी।

२१ नर-पुर = पृथ्वी।

२२ पृथु = प्रवीण, महान्, राजा पृथु, जिनकी चौबीस अवतारों में गणना होती है। बलभद्र = वीर।

सत मति जयमय धारि विपृथु भट चल्यो महाबल ।
बल सँग चार प्रकार पत्ति, हय, स्यंदन, मैगल ॥
गल मोतिन की माल, ढाल, करवाल लिए कर ।
करत सिंह सम नाद जाहि सुनि सडर होत पर ॥
परमेश्वर को हित चाहि चित भयो कमर परिकर कसत ।
सत मख सम गौर सरीर बर लखि जिहि जदु उर सुख बसत ॥२३॥
सत्राजित भट चलेउ सुरथ राजित अपराजित ।
जित निरखत भरि रोस भगहिं डर सहित अहित तित ॥
नित जदुपति हित चहत, बिहित भट चरित, चतुर चित ।
असित केस, असि निसित, कमल बिकसित मुख, पट सित ॥
बपु परम बरसती लच्छमी नहिं सरस्वती सकति कहि ।
रन देन कालिका भच्छ कों लसो अच्छ संग्राम महि ॥२४॥
चलो प्रसैन ससैन सैन जिमि अपर खगन पर ।
किए अरुनता ऐन नैन जयलैन चाह बर ॥
उग्रसैन—हित चाहि बिदित जग-जैन चैन-घर ।
कहत 'मारु धरु' बैन परन रन दैन पैन सर ॥
पचरंग चाय कंचन बिसिख सोहत सित डोरि भली ।
मनु मघवा चाप बकावली उभय बीच बिजुरी रली ॥२५॥
कृतवरमा भट चलेउ अभरमा कंचन बरमा ।
कर मानिकमय खग्ग बिहित करमा भट धरमा ॥

---

२५ सैन = (फा० शाहीन) एक प्रकार का शिकारी पक्षी । बकावली = बगुलोंकी पाँति ।

गर माला मनि नील धरे परमा नाफरमा।
बिमुकरमा कृत शस्त्र लसत परमा रन मरमा॥
सिर सेत छत्र छबिधर फिरत गिरत सुधा के बूँदगन।
मनु चक्र चढ़ेउ चल चंद्रमा स्रम तें स्रवत प्रसेद-कन॥२६॥
सतधन्वा भट चलेउ सुरथ सत रवि-दुति दरसत।
करसत कर कोदंड सूर सरसत हिय हरसत॥
परसत धुज आकास अपर सत मधि भय बरसत।
बिलसत उर बर हार लसत मनि उडुगन धरसत॥
अरि अंग काटि रन मग भरौं जादव जीव उमग भरौं।
नृप सिविर लूटि पुर नग भरौं आज बिजय जस जग भरौं॥२७॥
चल्यो बभ्रु पट सुभ्र धरे अति गरजि अभ्र सम।
सीस किरीट अनूप रूप लखि नयन होत भ्रम॥
जदुबंसी सरदार ध्यान उर बंसी-धर को।
पर-बिध्वंसी परम प्रसंसी रन बल बर को॥
बखतर बिसाल आयस रचित उपमा नहिं कहि जात है।
रन-हित लपेटि तम गुनहि तनु मनु रजगुन सरसाति है॥२८॥
देवक चले सुजान भले सेवक सँग लीने।
सत सूरज सम तेज लसत दरसत रस भीने॥

---

२६ नाफरमा=(फा०) एक फूल।

२८ आयस=(अ०) फौलाद, ईस्पात, लोहा।

कोटिन सुरथी संग जंग हित तंग कवच कसि।
उर उमंग अरि दंग करन नव अंग रहे लसि॥
द्रग सहस सहस गुन सुजसधर हरि-मातामह छबि छए।
मुख सहस सहस गुन धीरबर बिजय हेत चलते भए॥२९॥
देववान बलवान चलेउ कर सर कमान धरि।
धारे मनि-तनत्रान, जान चढ़ि रिसि महान भरि॥
हरि-मातुल बल अतुल चरम बरतुल बर दरसत।
जदुकुल-मनि मति बिपुल गात बल पुल सम हरसत॥
दहिनी दिसि लसत किरीट के मोतिन को तुर्रो अमल।
हरजटा सुमन-मय तें मनहुँ निकारि चल्यो बहि गंगजल॥३०॥
चल्यो तबै उपदेव देवपति-सम रवाब धर॥
मुर मुर लीने संक भजहिं अरि-दारा जा डर।
सारंगी-हित चहत समर करतब लायक बर।
सिर फहरात निसान बनी मनिमाला सुंदर॥
जिमि भेरी दल लै बिपिनपति रिसि दुचंग मन मैं धरत।
तिमि लस्यो प्रवीन उताल गति सुर सिंगार करि समर रत॥३१॥

---

३० बरतुल=वर्तुल, गोल।

३१ रवाब=एक प्रकार का बाजा, (रोआब) तेज। मुर=मुरचंग, इससे मुरारि की ध्वनि निकलती है। मुरली से मुरलीधर की ध्वनि आती है। सारंगी=श्री कृष्ण, शार्ङ्ग धनुष को धारण करने वाले।

चल्यो सुदेव सुजान प्रीति हिय मैं अति पूरी।
रथ पर गादी बैठि मित्र मोदक छबि रूरी॥
रनमग दल सों भरत सेवकन धन बहु अरपत।
बूँदी सम रस तजत खंड मंडत पर तरपत॥
आगि जले बीरन करत सकल ठोर बिख्यात जस।
मागध बराबरी करन कों लसेउ मत्त बर फील अस॥३२॥
जदु-मुद-बरधन चलेउ देवबरधनु कर बर धनु।
गोवरधन-धर-जननि-बंधु चतुरंग लिए अनु॥
सिर मुकुता मनि छत्र बादले की झालर बर।
निसिकर-कर के तार लसैं घेरे मनु ससि-कर॥
बिसिखाकुल करि रन परन कों व्याकुल जो अति करत मग।
हरि मातुल बढ़ि लरतो भयो जा तुल कोउ नहिं बीर जग॥३३॥
चले सूर रन सूर सूर मोहत प्रभान सों।
उर गरूर भरपूर दूर रव भरत जान सों॥
सेत केस सिर सोह मुकुट बर रतन जड़ाऊ।
भागवंत बिख्यात पौत्र जिहि हरि बलदाऊ॥
उर लाल-नील-मनि-दुरह-मनि-माल मिली छबिकहिय किमि।
उर उरवी सुरसरि, सुरसती, जमुना मिलहिं प्रयाग जिमि॥३४॥

---

३२ गादी=गद्दी, एक प्रकार की मिठाई। मोदक=प्रसन्न करने वाला, लड्डू। मगदल=मगदल प्रसिद्ध मिष्टान्न। सेव-कन=नौकरों, सेव के टुकड़े निमकीन मिठाई। बूंदी, खंड, जलेबी, ठोर, बरा, बरी, बरफी आदि के नाम आए हैं।

देवभाग बड़भाग चलो बल सहस नाग जस ।
उर संगर अनुराग सत्रु तृन बाग आग अस ॥
कर बरछी बिसभरी सूर-सुत सूर फिरावत ।
जनु करि कर सों पकरि ब्याल फेरत छबि छावत ॥
रथ चारि तुरग बर दरसते सुरपति-हय से सरसते ।
सँग कोटिन भट हिय हरसते जे रन आयुध बरसते ॥३५॥
चित्रकेतु जय हेतु चल्यो धरि चित्र केतु बर ।
बुधिनिकेतु बलसेतु सत्रु-ससिकेतु धीरधर ॥
देवभाग को पूत सुभट पुरहूत धूत मति ।
लसत सूत मजबूत चलत रथ चपल सूत गति ॥
पचरंग पटूको कटि कसे पास असी अति छबि धरति ।
मनु इन्द्र धनुष फैंटो बँध्यो मिलि बिजुरी जगमग करति ॥३६॥
चलो बृहतबल बीर बृहत बल संग महत बल ।
मारु कहत जय चहत लखे पर जिय न रहत पल ॥
देवभाग-सुत चंड लिए कोदंड कठिन कर ।
मनि भूषन तन धरे लसत कंचन को बखतर ॥
सिर लागि छत्र सों कनक पट चारु धुजा फहराति है ।
मनु ससि गहि राखी बिज्जु सो जावे हित अकुलाति है ॥३७॥

---

३५ नाग=हाथी ।

३६ चित्र=बिचित्र ।

देवश्रवा बसुदेव-अनुज बर मनुज-पुरंदर ।
चलेउ बैठि रथ बीच सिंह जनु कंदर अंदर ॥
चारहुँ ओर अथोर घोर दल सोभा छावत ।
बढ़ि रन ठोर सजोर सोर करि घनहिं लजावत ॥
सिर फरहरात धुज बात बस लखि चित नहिं थिर रहत है ।
'द्रुत दुरहु दुरहु नतु मरहुगे' यह सत्रुन सों कहत है ॥३८॥
चलेउ सुबीर सुबीर धीरधर देवश्रवा-सुत ।
कमलापति-हित चहत बिसद करतूत सुजस-जुत ॥
कर नवरंगी ढाल खग्ग बर आय सकेरा ।
जंबू दीप प्रधान बुद्धि अमला उर डेरा ॥
बरछी बर श्रीफल सों धरति परिघा बड़हर शूल अस ।
मृद कुंभ आम-सम सत्रु-सिर फूट जात जा घात बस ॥३९॥
तब इषुमान प्रधान चलेउ इषुमान ज्ञान-धर ।
देवश्रवा-संतान समर पर-सान-मान-हर ॥
कटि निखंग इमि लसत मनहुँ कद्रू अबहीं तित ।
जनि जहरिन की मोट कछुक फारी देखन हित ॥
निसिकर-कर करवाल लै चलत सुरथ पथ धुनि भरत ।
धरनीधर घर घर धरनि की धरकनि धीरज धरि घरत ॥४०॥

---

३८ इसमें कमल, तूत, नवरंगी, जंबू, आमला, श्रीफल, बड़हर, आम और फूट फलों के नाम आए हैं ।

३९ इषुमान=तीर चलाने वाला ।

४० कद्रू=कश्यप ऋषि की स्त्री और नागों की माता । जहरी=साँप ।

आनकदुंदुभि-अनुज चल्यो आनक दै आनक।
मित्रन सुखद सरूप परन कहँ परम भयानक॥
कनक कवच पर मुक्तमाल छबि बढ़ी अपारा।
मनहुँ मेरु की पीठ लसै गंगा का धारा॥
रथ रतनन सों छबि छावतो घन सम सोर मचावतो।
चढ़ि लसो चाप चमकावतो सुभट सघन मनभावतो॥४१॥
आनक-नंदन चलेउ सत्यजित मधु-कुल-मंडन।
माधव जाके जेठ बंधु सुचि गुन अरि खंडन॥
मुद बरसावन जदुन केतु नभ पच्छि बिमोहत।
धरे चाप इखु हाथ स्वामिकार्तिक बल सोहत॥
रन मारग सिर गरबीन के पायपोस जाको रहत।
मुसुकात कढ़हिं रद माघ से फाल्गुन सो जोधा महत॥४२॥
पुरजित चलेउ प्रचंड सत्रु-पुरजित पुरजित थल।
समर अहित चितचाउ हरन लीने अगनित दल॥
सूर सत्यजित-अनुज मनुज मंडन सोभित भल।
खग्ग चरम बर बरम धरे भट परम नयन चल॥

---

४१ आनकदुंदुभि=वसुदेवजी। आनक=डंका।

४२ मधु=चैत्र। माधव=वैशाख। सुचि=आषाढ़। नभ=भादों। चाप=कुँआर। माघ=कुंद का फूल। फाल्गुन=अर्जुन। इस पद में बारहों महीनों के नाम आए हैं जिनमें जेठ, सावन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ और फाल्गुन स्पष्ट हैं।

सिर सेत छत्र ता मध्य मैं खगे एक पन्नो जरो।
राका मयंक-सुत अंक लै उदित ब्योम मनु लखि परो ॥४३॥
सृंजय जय-हित चलेउ बंधु लघु देवश्रवा को।
जाको तिहुँ पुर बीच एक जीतन को साको॥
किमि प्रभुताई कहिय बेद जस गावत साँचा।
देव देव गोविंद राम के लागत चाचा॥
सिर मुकुट कनक को छबि भरो लसत चारु हीरन जरो।
मनु सूर किरन की जाल रचि मधि बिधि बिधुमंडल धरो ॥४४॥
बृष संजय-सुत चलेउ चपल धरु मारु पुकारत।
कोल केतु जय हेतु सेतु सर से बिसतारत॥
एक बीर दस दिसन बिदित सत बिक्रम कर्त्ता।
सहसनयन-बलधरन अयुत सुरथिन को भर्त्ता॥
जय लच्छ हृदय आनँद प्रयुत कोटि जासु भल जयन मधि।
चढ़ि चरब अरब सोभित भयो पद्मनयन के सयन साधि ॥४५॥
दुरमरसन बृष-अनुज चलेउ संगी दल लीने।
नैनू प्रिय प्रिय चहत जुद्ध देसाटन कीने॥
गजी सरिस बट बीर गुनी गाढ़ो अति खासो।
पहिरे अम्बर चिकन नैनसुख मित्रन भासो॥

---

४३ पुरुजित=अर्जुन का मामा और कुंतिभोज का पुत्र था, विष्णु।
४५ इस पद में एकाई से लेकर पद्म तक संख्या दी गई है।

तन जेबवंत सुर तूल लस मलमल अरि साजत बदन ।
जिन मार कीन करवार बढ़ि लखि न करहिं ते गुल बदन ॥४६॥
स्यामक नामक वीर चलेउ बसुदेव-अनुज बढ़ि ।
मुख ते पाढ़ि 'धरु मारु' चारु रथ चढ़ि रिसि तें मढ़ि ॥
कर लीने तिरसूल तीन फल सोहहिं कैसे ।
उन्नत करि निज सिरन बासु किय बासुकि जैसे ॥
रन सूर सूर दस लच्छ दुति सूर सबन विक्रममयो ।
मगरूर पूर भरि नूर दिसि जय जरूर सोभित भयो ॥४७॥
चलो सुभट हरिकेस सुवन स्यामक को भारी ।
एकचक्र नृप जोग दोय भुज सर-धनु-धारी ॥
तीनि भुवन बिख्यात चारि जुग कीरति जाकी ।
पंचबदन-बल अंग धाक षटमुख सी बाँकी ॥
जिमि सात दीप रच्छन करहिं घेरि आठ दिगपालगन ।
तिमि निज दल रच्छन परन सों नव भट दस दिसि घूमि रन ॥४८॥
हिरन्याक्ष रनधीर चलेउ बढ़ि हिरन्याक्ष-बल ।
चढ़ि अति मत्त मतंग धारि तन अंबर निरमल ॥
छत्र धरम आसीन पीन भट मुख छबि छावत ।
मनहुँ नील गिरि सिखर उदय निसिमनि मन भावत ॥
हरिकेस-अनुज बर बेस धर नृप निदेस कहँ धारि जिव ।
भो चहत लरन मगधेस सों गरजि बिसेष बनेस इव ॥४९॥

४६ इसमें संगी, नैनू, साटन, गज़ी, गाढ़ा, चिकन, नैनसुख, तनजेब, तूल, मलमल, सारकीन और गुलबदन कपड़ों के नाम आए हैं ।

चलेउ कंक निरसंक धरे सर कंकपत्र-धर।
सुख अकलंक मयंक लिख्यो जय-अंक भाल पर॥
पर सोनित को पंक प्रेत परजंक करत रन।
कीस दही जिमि लंक लखत तिमि बंक मगध तन॥
मुख बारिज भयो बजावतो बारिद बृंद लजावतो।
जनु हंस कलानिधि सों मिलत गदगद सबद सुनावतो॥५०॥
रितधामा बलधाम चलेउ साजि संगर सामा।
कंक-सुवन गतसंक पहिरि बर पटको जामा॥
नैन ललिमा चैन बैन धरु मारु पुकारत।
सत्रु-सैन गत चैन पैन सर ताजि करि डारत॥
रथ चलत सैन सों बढ़ि समर पाछे दल जय स्वारथी।
इमि लसत मनहुँ चलि जात हैं भागीरथ भागीरथी॥५१॥
जय अरि जय हित चल्यो बदन लछमी बर ढंगी।
नदत भैरवी भाति धरे गति मद मातंगी॥
सायक धूमावती करत दिसि घन सम काली।
धारे भुवनेश्वरी सान कर बर करवाली॥
चौबगला मुखिया भट लिये तारापति-दुति धरत है।
श्रीसहित लसो परसैन जो छिन्नमस्तका करत है॥५२॥

---

५२ इस पद में दस महाविद्याओं के नाम-लक्ष्मी, भैरवी, मातंगी, धूमावती, काली, भुवनेश्वरी, करवाली, बगलामुखी, तारा, छिन्नमस्तका-लाए गए हैं।

चलेउ समीक अनीक लिए अति नीक मुकुट सिर।
पर-तन सर बलमीक करन जग-लीक जासु थिर॥
महिपति अपजस देन समर बर तेज बिराजत।
मारुतसुत-सम नदत व्योम धुज उन्नत छाजत॥
कर साँग सुहाई दरसती लखि जदु-सैना हरसती।
बिजुरी सी सोभा सरसती छूटत भट असु करसती॥५३॥
चलेउ सुमित्र अमित्र-दलन दोउ नित्र लाल तर।
धरे बरम मनि चित्र मित्र दुति मित्र सुखद बर॥
सुभट समीक-कुमार लसत पट निपट सुहावन।
झटपट रन जय करत प्रगट अटपट करि दावन॥
घन शब्द करहिं मिलि परसपर कनक झाँझबर रूपधर।
हय बने रुद्र रस से अरुन चलत गंध बह सम सुघर॥५४॥
अरजुन अरजुन सुजस चलेउ अरजुन-बल भीनो।
अरजुन जन की सुनी न अस सपनेहुँ जिन कीनो॥
जिमि किय अरजुन-पात स्याम तिमि अरि करि नावत।
अरजुन बहु भुज सरिस समर सर झरि बरसावत॥
जाके रथ की छाया बृहत दूर भैम तापहि करत।
मागध-मुख-पद्म समूह पै परि तुषार सम छबि हरत॥५५॥
चल्यो बान बलवान बान बानासन कर गहि।
पहलवान जिमि बान सदा जयवान समर महिं॥

---

५४ अर्जुन=उज्वल, सहस्रार्जुन, एक प्रकार का वृक्ष।

बाजत घोर निसान सान सुरत्रान लजावत ।
सँग सुजान गुनवान दुरद हय जान सुहावत ॥
हरि सम बड़पन, रिसि रुद्रसी, सक्ति सरिस है सक्ति तन ।
अरिजय सिधि लसेउ गनेस सों सूर-तेज धर सूर मन ॥५६॥
वत्सक चलेउ प्रचंड लिये कोदंड सहित सर ।
अति उदंड भुजदंड सुजस ब्रहमंड मंड बर ॥
छत्र-धरम को सीम भीम-बल दृग रँग भीने ।
अरजुन पट तन धरे चित्त रन रस महँ कीने ॥
जिमि नकुल नाग को मद हरत तिमि अरि अरदन प्रन किए ।
सहदेव देवपति-सो लस्यो जबर जादवी-दल लिए ॥५७॥
बृक वत्सक को पूत चल्यो रजपूत-मुकुट-मनि ।
बल अकूत पुरहूत-सरिस अति धूत मारु भनि ॥
मंडल सम कोदंड करत जब चंड अपानो ।
सोहत करि कर पकरि फिरावत उलका मानो ॥
सिर केतु सुहावन फरहरै जेहि लखि परदल थरहरै ।
सुर-राज-केतु की दर हरै जादव जोधा डर हरै ॥५८॥
बृक बलसागर चलेउ सूर-सुत नूर पसारे ।
कर धारे कोदंड सरपमै सर अति भारे ॥
सीस कनकमय मुकुट निपट पटु समर करन मैं ।
हीरा मानिक जलज जटित बर बखतर तन मैं ॥

---

५७ इस पद मे पाँचों पांडवो के नाम आए है ।

मकराकृत कुंडल करन मैं बने परम मनभावने।
मनु सहबासी ससि सों मिलन आए मकर सुहावने ॥५९॥
चल्यो तच्छ परतच्छ लेत तच्छक सी साँसै।
किए हिए महँ लच्छ अच्छ अरि लच्छ बिनासै ॥
दच्छ जदुन के पच्छ लसत दोउ अच्छ लाल अति।
जच्छराज-छबिधरन बच्छ दर अनुज स्वच्छमति ॥
बृक-सुवन बिदित सब भुवन जस मुक्तमाल उर सोह घन।
मुख-नखत-राज परदच्छिना घेरि करहिं मनु नखतगन ॥६०॥
पुष्कर पुष्कर-नयन चल्यो बृक-सुत बिकरारो।
दुष्कर बिक्रम करन संग लीने दल भारो ॥
घेरे चंचल चारि चारु स्यंदन मैं जोरे।
घोरे हंस समान सान सुर हय की तोरे ॥
धनु मंडल मुख सर दंत से सूल सक्ति असि भल्ल पग।
नरसिंह सिंह सोभित भयो सत्रु मृगन पर समर मग ॥६१॥
चल्यो साल्व रनधीर तीर तूनीर साजिकै।
तच्छ-अनुज बर बीर संग भट भीर राजिकै ॥
बहु मनिमय रथ मध्य भयो प्रतिबिंबित सोई।
सहसन साल्व निहारि आचरज भे सब कोई ॥
बृक-सुवन कौन यामे अहै यह भ्रम उर अधिकात है।
जब गरजि उठत धरु मारु कहि तब पहिचानो जात है ॥६२॥
चले आप बसुदेव भेव गुनि देवराज-बल।
सदा समर जयदेव जसी-मनि एव धरनि थल ॥

को कहि सकै प्रताप तकै भूधर सिर नाए।
जिनके जाए स्याम जगत जिन्ह हर बिधि जाए ॥
सँग लीने बहु अच्छेहिनी गज रथ तुरग न सोहिनी।
सुरराज चमू मन मोहिनी करन चहै जय बोहिनी ॥६३॥

मुख ससि सर गर अधिक बचन श्री अमृत ऐसी।
सुर-सुरभी सुरबृच्छ देनि करतल महँ बैसी ॥
हाला लौं दृग अरुन चाल मोहत ऐरावत।
भट कौस्तुभ धनु धरे जलद सम कंबु बजावत ॥
हय लखि लजात उच्चैश्रवा चल गति रथ जिमि अपसरा।
अरि रोग ग्रसित जदु भटन को धनवंतरि सम गुन भरा॥६४॥

उर अंबुज की माल बरम मनिजाल बिराजै।
भेरी पटह निसान आदि सँग बाजन बाजै ॥
करन मयूराकार चारु कुंडल अलकन लगि।
मनहुँ मोर बिबि गए पन्नगी पास छुधा पगि।
जा जनम बजी सुर दुंदुभी सोइ भट आनकदुंदुभी ॥
जिमि बालि चल्यो लखि दुंदुभी तिमि सोह्यो मति रनचुभी ॥६५॥

गद मद हद बढ़ि चल्यो बिसद जस छत्र धरम रत।
अरि जीतन के अरथ राजि रथ पथ करि तम हत ॥

---

६४ हाला=मदिरा। कौस्तुभ=कृष्णजी के एक नाम कुस्तुभ का अपत्यवाचक कौस्तुभ है। इस छप्पय में समुद्र-मंथन के समय निकले हुए रत्नों के नाम आए हैं।

६५ दुंदुभी=एक राक्षस जिसे बालि ने मारा था।

समर कामदर–सरिस सरूप भयानक लागत।
करत सत्रु असु मोक्ष जबहिं सर धारा त्यागत॥
बसुदेव–सुवन सत सूर दुति उर गरूर पूरन परम।
हरि-अनुज मनुज-मण्डन लस्यो जगत जासु जाहिर करम॥६६॥
सारन चल्यो उदार बैठि बारन अरिदारन।
जय कारन प्रन किये करत रस रत ललकारन॥
श्याम–अनुज बलधाम बने सँग सुभट हजारन।
बान कमान कृपान किए बहु आयुध धारन॥
मनि काम बनायो छत्र सिर क्रोधमयो बर धीर धुर।
रन लोभ लागि लसतो भयो मोह देन मगधेस–उर॥६७॥
दुर्मद दुर्मद चलेउ बरम धरि परम सुलच्छन।
लच्छन जोधा लिए धनुष टंकारि ततच्छन॥
सीस केतु फहरात बात बस सोभा साजत।
भेरी संख मृदंग संग बहु बाजन बाजत॥
बहु छत्र अड़ानी कलस धुज राजत राजत कनक के।
रवि ससि गहि लीने बिज्जु मनु नचहिं चपल बर बरन के॥६८॥
बिपुल बिपुल बल चलेउ रचत रन जो पुल सर को।
जदु–कल–कमल–दिनेस करत व्याकुल चित पर को॥
लै साइत अनुकूल द्विजन सों मन मुद छावत।
दच्छिन कर कोदण्ड चंचला सम चमकावत॥

---

६६ कामदर=शिव।

मुख कहत आजु बधि धृष्ट अरि तरपहुँ चौसठ जोगिनी ।
बिललात फिरैं बनपात प्रति मगध-सुंदरी सोगिनी ॥६९॥
रतन कवच कसि चलो धीर ध्रुव ध्रुव रन प्रन करि ।
करि स्यंदन हय पत्ति संग चढ़ि चारु सुरथ परि ॥
परिघ गदादिक धरे रचत जो अरि सों नित सरि ।
सरिस न जाके बीर जगत गाजत लाजत हरि ॥
हरिमाया बल जस ब्रह्म सों जीव धरे जय आस सत ।
सतरात लसो बसुदेव-सुत मागध मारन घात रत ॥७०॥
क्रून कमान धरि चल्यो सुकृत-सागर बलआगर ।
परम प्रतापी बीर धीर धरमज्ञ उजागर ॥
संग फौज अति ओज धरे सब धरनि बिदित जस ।
बाजत भेरी तूर हृदय भरपूर बीर रस ॥
दै ताल उताल बिसाल दृग मत्त ब्याल ऐसो लसो ।
मनु मगध-पाल की सैन को काल रूप धरि रथ बसो ॥७१॥
भूत भूतपति सरिस ख्यात करतूत चल्यो बढ़ि ।
आनकदुंदुभि-पूत धूत मजबूत कवच मढ़ि ॥
चारु केतु फहरात न दृग ठहरात चमक बढ़ि ।
अति बिक्रम दरसात भ्रात हित मारु मारु पढ़ि ॥
समरथ पैदल नर है तऊ जीति सकत सत सत्रुगन ।
समरथ पैदल न रहै सबै तब कि बार जय लहत रन ॥७२॥

---

६९ तरपहुँ=तर्पण करेंगे, तृप्त करेंगे ।

चलेउ सुभद्र सुभद्ररूप बलभद्र-अनुज बर।
सब तिथि जिन धरि नेम अतिथि पूजे करि आदर॥
सपने एकहु बार पीठ रन दीन न कबहीं।
मुख नछत्र-पति-सरिस हरष-प्रद जादव सबहीं॥
बहु भाँति सराहन जोग भट करन अधिक धनु बिधि करन।
बसुदेव-सुवन सोभित भयो करि पर जीतन को परन॥७३॥
भद्रबाहु भट नाहु चल्यो आजानुबाहु बर।
उर उछाहु जय लाहु हेतु जिमि राहु मिहिर पर॥
जथा वेद मैं साम तथा सरनाम भटन मैं।
उर मोतिन को दाम स्याम सम सूर कटन मैं॥
ब्रह्मंड मंड जस चंड-तर टंकारत कोदंड कर।
द्युतिवंत दुतिय दिन-कंत सम सत्रु भेद कर चाह धर॥७४॥
चल्यो भद्र बलभद्र-अनुज रन भद्र रूप-धर।
सिंह सरिस करि नाद सक्र-धनु सम धनु गहि कर॥
लगे अरब के अरब सुरथ पथ चलत चरब तर।
परब सिंधु सम मुदित सरब सम उदित गरब-धर॥
बसुदेव-सुवन जदु-देव-हित मथुराते कढ़तो भयो।
लहि भार चार दिग्गज सहित सेस सोक मढ़तो भयो॥ ७५॥
चल्यो नंद सानंद नंदनंदन को भाई।
कनक दंड सों लागि ब्योम महँ ध्वज फहराई॥

---

७४ मिहिर=सूर्य। कटन=मारकाट, लड़ाई।

क्रम सों कहि धरु मारु कढ़्यो मधु जनपद तें तुर।
पिंग जटाधर-सरिस रूप मोती माला उर॥
सिखि सिखा सरिस सायक धरे करत नाद घन सों अधिक
धनु बेद बिसारद भट लस्यो समर सत्रु-सैना-बधिक॥७६॥

सह अनंद उपनंद चल्यो नंदकधर भ्राता।
जदु-कुल-कुमुद-दुजेस बेस संगर रँग राता॥
बरम परम दुतिमंत धरमकर-सम दरसाता।
जा अस भट-सिरमौर रचेउ नहिं और बिधाता॥
सब भाँति अपूरब बीरबर दच्छिन कर सर गरल फल।
रन करत सत्रु पश्चिम दसा उत्तर सारथि अधिक बल॥७७॥

कृतक चलेउ बसुदेव-सुवन सब भुवन बिदित जस।
उर घमंड बरिबंड चंड भावत संगर रस॥
सोहित कर करवाल हरत दिसि को तम भारी।
बिधि रवि कला समेटि एक साँचे मनु ढारी॥
महताबी सम सर फल जबहिं चलत राह स्वाबी भरत।
दृग बने गुलाबी मद भरे लखि अरि मुख आबी करत॥७८॥

सूर-सुवन-सुत सूर सूर दुति चल्यो सूर बर।
कुंडल मीन अकार कमठ सम धरे चरम कर॥

---

७६ मधु–जनपद=मथुरा। तुर=शीघ्र।

७८ स्वाबी=प्रकाश।

सित बराह तिय ख्यात सुजस नरसिंह कोपधर ।
सँग भट बावन सहस सबै भृगुपति सम धनुधर ॥
अभिराम बीर बलराम को बीर धीर बुध-मुकुट मनि ।
पर कों न मिलत कल की घड़ी संगर जाके संग ठनि ॥७९॥
कौशल्या-सुत चलेउ बली कौशल्या-सुत सम ।
केसी नाम प्रचंड सत्रु-असु-हरन अपर जम ॥
कहि नहिं जाइ सरूप भूप मोहत सुरगन को ।
नव कुमार मनु मार बन्यो सुख धरि जग जन को ॥
असि लसी हाथ में रथ धरी तापर राखी ढाल बर ।
मनु कमल चुराई ससिकला ताहि लुकाई पत्रतर ॥८०॥
चलेउ हस्त धनु हस्त धरे रन मस्त महाबल ।
आनकदुंदुभि-सुवन संग दुंदुभि बाजति भल ॥
सिर निसान फहरात सान नहिं सुरपति सों कम ।
सब दिसान दुति भरत करत पर को पिसान सम ॥
ईसान सरिस दिसि अग्नि दुति बायु बेग रथ हय धरत ।
नैरित्य-नाथ सम गरजिकै परन परम संका भरत ॥८१॥
हेमांगद भट चल्यो हेम अंगद भुज मढ़िकै ।
मथुरा कंचन द्वारवती द्वारे ते कढ़िकै ॥

---

७९ इसमें दशअवतारों के नाम आए हैं ।

८१ इसमें दिग्पालों के नाम आए हैं ।

हरि माया सम प्रबल कांति सिखि सी परकासी।
कटि काँची मनि-जटित सूर मधि सूर प्रभा सी ॥
अरि जीवत मो देखन अवध इमि सगर्व गरजनि करतें।
पिअवंती तिय सी सैन सँग रथ हय दंती छबि धरत ॥८२॥

चलेउ चतुर उरुवल्क चतुर हयजुत चढ़ि स्यंदन ।
गरजि जोर घनघोर सरिस जादव-कुलनंदन ॥
सत्रु-निकंदन रूप अंग लाए बर चंदन ।
उग्रसेन-हित चाहि गुरुन के पद करि बंदन ॥
बहु साँग भल्ल गन मधि लसत सूरमुखी रथ छत्रबर ।
मनु चले जात मनिदंड चढ़ि उडुगन में ससि दिवसकर ॥८३॥

तब बिप्रष्ठ बलवान चल्यो बल-अनुज लिए बल ।
करत सत्रु उर मेष जौन बृषधुज सम परदल ॥
रथ दुहुँ दिसि असि मिथुन अहित चित करक करन तुर।
गरजि सिंह सम देत हरष देवक-कन्या-उर ॥
तुल वृश्चिक डंक नराच धनु करन मकर कुंडल महत ।
मनि कुंभ सहित रथ चढ़ि लस्यो मीन-केतु-पितु-हित चहत ॥८४॥

---

८२ इसमें 'अयोध्या-मथुरा-माया'-आदि पवित्र नगरों के नाम आए हैं।

८४ इस पद में राशियों के नाम आए हैं। मेष=एक राशि का नाम, (फा० मेख़) काँटा। मिथुन=एक राशि का नाम, जोड़ा। मीन-केतु=प्रद्युम्न।

स्रम श्रम गत व्है चल्यो बाल वय कर धरि भालो ।
लवन बधन अरिदवन अयोध्या तें जनु चालो ॥
रन आरन्य मृगेस धन्य तर कंचन माली ।
किसकिंधा-पति बालि-सरिस अतुलित बलसाली ॥
तन सुंदर अग्रज स्याम सम युद्ध-क्रुद्ध हर-सम लगत ।
पूरब पश्चिम उत्तर दखिन जाको जस जाहिर जगत ॥८५॥
चलेउ प्रतिश्रुत बीर बिश्व-बिश्रुत बलसागर ।
आनकदुंदुभि-सुवन सुजस सब भुवन उजागर ॥
संग सजीली सैन परम बलऐन बिराजति ।
सहसनैन की सैन नैन सों लखि जिहि लाजति ॥
उर अति उछाह रन को बढ़्यो कहि नहिं जाइ सरीर जस ।
मनु चल्यो धीर बलबीर हित धरि सरीर बर बीर रस ॥८६॥
कल्पबर्ष भट चल्यो किए संकल्प बिजय को ।
समुझि अल्प बल परन स्वल्पहू लेस न भय को ॥
कर लीने कोदंड चित्त संगर महँ दीने ।
कीने सब रन साज नैन सोहत रँग भीने ॥
बनपति सम नरदन अमित बल निसि-मनि मनि-माला गरे ॥
अरि अरदन पन मनु आपही चल्यो लरन हित तन धरे ॥८७॥
चल्यो बीर बसु हंस हंस दुति हंस बरन पट ।
जादव-कुल-अवतंस सत्रु बिध्वंस करत झट ॥
दीनबंधु को बंधु बिंध सम गौरव-धारी ।
हिए मोद भरि लिए संग गज-रथ पद चारी ॥

जाके सर गंग नहाय अरि जमुना परसत समर मरि ।
हरि-बंधु लसो जा छबि कहत रहत भारती लाज भरि ॥८८॥
गिरिधर-अनुज सुबंस चल्यो जदु-बंस बढ़ावन ।
रिसि मन धरे अपार चारु रथ चढ़ि रन चावन ॥
धनु सर सोहत हाथ शत्रु मोहत जिहि जोहत ।
जो प्रन करि अरि रोम बिबिध बिसिखन सों पोहत ॥
द्रुत दरत दीन दुख दान दै गरजनि सुनत लज्जात हरि ।
सह सैन बिजय मानहुँ चल्यो उग्रसेन-हित रूप धरि ॥८९॥
चले राम अभिराम राम इव धनु टंकारत ।
दीनबंधु हरि-बंधु सिंधु सम बल बिस्तारत ॥
जाके दस सत सिरन मध्य इक सिर पर धरनी ।
लसति जथा गजसीस स्वल्प सरसप सित बरनी ॥
बिक्रम अनंत अंतक अधिक सुजस अनंत अनंत मति ।
परताप अनंत अनंत गुन लसे अनंत अनंत गति ॥९०॥
गौर बरन द्युति धरन धरन गौरव रन भारी ।
लाजत राजत सैल भाँति बर कांति निहारी ॥
नवल नील पट लपटि निपट सोहत मन मोहत ।
मनु सिंगार रस छटा बीर घेरो जग जोहत ॥

---

८९ हरि=सिंह ।

९० दस-सत-सिर=शेष भगवान । सरसप=सर्षप, सरसों । अनंत=जिसका अंत न हो, शेष ।

गंधर्व सिद्ध अहि देव गन करहि सर्व अस्तुति भले।
तिन सब सों पूजित जगतजित उग्रसैन-जय-हित चले ॥९१॥
मोतिन के आभरन दिसा-तम-हरन धरे तन।
मनहुँ बास कैलास सिखर पर करत नखतगन ॥
सीस मनोहर मुकुट लगी दुहुँ दिसि मनि-कलगी।
जनु ससि बिबि दिसि लसत कला ससि की बिबि अलगी ॥
कहि जाय न छबि रहि जाय कबि कांति निरखि बहि जाय रवि।
दहि जाय अपर पवि धर सरिस चलत सुरथ अहि जाय दबि ॥९२॥
दच्छिन दिसि हल लसत सदा दच्छिन जदुगन पर।
षटजनमा कर सक्ति सक्ति सँग रिसभ सक्तिधर ॥
जयद चारु गंधारराज दौहित्र गुरुहि सत।
पर बल मध्यम करन पूज्य जग रवि पंचमवत ॥
बपुधर धैवत सतहित दिसन जिमि निषादपति मित्र जस।
भुव दीप सप्त सुर असुर पुर करसन समरथ सोह अस ॥९३॥
बाम दिसा जग कुसल रूप बर मुसल बिराजत।
समर असुर को बाम अमर के संकट भाजत ॥
निरखि बाम कर नयन जरानंदन के फरकत।
बाम सरिस पर बीर धीर त्यागत उर धरकत ॥

---

९२ धर=कपास का डोडा।

बिधि बामदेव रवि सक्र ससि बामदेव बिधि-पुत्र कबि ।
महिधर महिमा जाकी कहत महिधर रथपर रहेउ फबि ॥९४॥
ताल समान बिसाल ताल आकृति धुज सोहत ।
काल सरिस करि ख्याल सत्रु मोहत जिहि जोहत ॥
तिमि दस दिसि फहरात बात बस बिमल पताका ।
राम सुजसमय लता लाल मनु सित रँग जाका ॥
सिर छत्र लसत मनु नखत-पति बंस बीर छाया करत ।
इमि लसे राम आराम सों बिजय काम मन मैं धरत ॥९५॥
खर नास्यो हानि समर अनल खर नासै जैसे ।
कियो भूमि पर लंब नासि परलंबहि तैसे ॥
इन बर मरकट मारि कमर कट करि महि नायो ।
रुकुम रुकुम सम दाहि दिव्य करि धाम पठायो ॥
अभिमान धूत लखि सूत सिर आम सूत सम तोरियो ।
कुंभीपुर जलकुंभी सरिस करसत कुरु मद बोरियो ॥९६॥
जेते जग मैं बली भए हैं है हैं सुर नर ।
सबके कारन रूप अहैं बल नाम उजागर ॥
अधिभौतिक के ईस भूतमय भद्र रूप धर ।
यासों कहि बलभद्र प्रकृति पूरित प्रपंच पर ॥

---

९४ महीधर=शेष भगवान, बलरामजी ।

९६ कट=गंडस्थल । रुक्म=सुवर्ण, रुक्मिणीजी का भाई ।

अधिदैविक आपुहि देवता याही सों बलदेव गुनि ।
अध्यात्मक आतमा व्है रमत यासों यह बलराम पुनि ॥९७॥
सत्रुहिं करत बिराम देत आराम मित्र-तन ।
रूप परम अभिराम राम तासों रसबरघन ॥
मुद भरि पालत काम अनुज-सुत समुझि समर महि ।
भक्त काम के पाल याहि ते कामपाल कहि ॥
यह करत धरा धर सीस दोउ भिन्न अपर को कोपि मन ।
सिर धरत धरा यासों कहहिं नाम धराधर धीर जन ॥९८॥
जस, प्रताप, ऐस्वर्ज, धरम, धृति, श्री, महात्म्य सत ।
यह अपने मन माहिं आपुनो जबहिं बिचारत ॥
तबहि सेस रहिं जात पार नहिं कोऊ पावत ।
यासों जग मैं सेस नाम सुर नर मुनि गावत ॥
ए सब गुन अहैं अनंत जेहि अन्त नाहिं काहू लह्यो ।
यासों अनंत यह नाम बर इनको सब वेदन कह्यो ॥९९॥
मित्र चितहि हँसि हेरि सत्रु तेजहिं करि भरसन ।
जाति भयहि नृप रीति नारि तन सुधि दै दरसन ॥
आर्त्त दुखहिं करि दया भक्त संसारहिं निज गुनि ।
सुर संकट बपु धारि भूमि भारहिं रनधनु धुनि ॥
मागध महीप दल हलहि गहि असुर असुहिं दै मुसल हिय ।
संकरसन करत सुभाव सों संकरसन तासों कहिय ॥१००॥

---

९८ कामपाल=बलराम ।

१०० संकरसन=कर्षण, खींचना ।

चलत भए घनस्याम मनहुँ घनस्याम धरे तनु ।
सुबरन सुबरन सुरथ बैठि पबि मंडप में जनु ॥
मोती झालर मनहुँ बकावलि मंडप द्वारे ।
नव रतनन को जुवा इंद्रधनु सनमुख धारे ॥
मधुपुर पथ मनहुँ अकाश बर चाउ वाउ प्रेरित भले ।
अरपत मनिमुकता जाचकन जल कन बरसत रति रले ॥१०१॥

आतिसी सुमन समान कांँति अति सोहति तन की ।
ता महँ जगमग जगति जोति भूषन रतनन की ॥
कहि न जाय छबि तौन मौन रसना कविगन की ।
मनु चमकति अँग अंग भगति नवधा निज जन की ॥
अभिराम अनूपम अमल जस अरि अरदन अजनत चरन ।
सुभ सोहै सज्जन सुख करन माधव धरनीधर धरन ॥१०२॥

कानन कुंडल लोल गोल सिर मुकुट मनोहर ।
करत ककुभ तम दूरि दरस जाको जग नोहर ॥
मनु रस अंबुधि मध्य अलौकिक अंबुज जायो ।
ताहि लखन बिबि मकर सहित रवि आपुहि आयो ॥
दोउ ओर अलक झलकत रुचिर सोभा बरनि न जाति है ।
मनु सुजन मनोरथ की लता प्रगट ललकि लहराति है ॥१०३॥

---

१०३ ककुभ=दिशा । नोहर=दुर्लभ ।

सोहत बखतर चारु दीठि ठहरत नहिं जोहत।
मनिगन अनगन प्रगट कहत उपमा बुधि बोहत॥
तैसेइ झलकत हार बिमल मुकुताहल माला।
भई रतन की भीर कांति इक सों इक आला॥
गर गोप अमोलक हीर की पुनि मुखमंडल रहेउ फबि।
मनु तखत बिराजेउ नखतपति नखत-वृंद मिलि लखत छबि॥१०४॥

पीताम्बर फहरात बातबस भरत सुगंधन।
जासु झलक लखि जीव आसु नासत भव-बंधन॥
कहि न जाय छबि तासु बड़ाई कैसे गाइय।
सोना और सुगंध दोउ याही महँ पाइय॥
कटि कनक किंकिनी सोहई मधुर नाद प्रगटाइकै।
परब्रह्म मध्य मनु श्रुति रिचा लपटि रहीं सब आइकै॥१०५॥

मृगमद-तिलक गोपाल भाल पैं नहिं जनात है।
तिमि बीरा को रंग अधर मैं मिलि बिभात है॥
नीलमनिन को हार हिए मिलि जात रंग मैं।
रसना तिमि छिपि जाति कमर पट पीत संग मैं॥
मनि हेम सुरथ मैं मिलि रह्यो तेज पुंज बिग्रह सुघर।
पहिचानि परत कोउ नरन नहिं को रथ कौन रथांगधर॥१०६॥

---

१०६ मृगमद=कस्तूरी।

घन मेचक तन चारु सीस बर मेचक सोहत।
वृंदारकगन सरस निरखि वृंदारक मोहत ॥
लसत बिनायक केतु बिनायक नसत निरखि रथ।
परम प्रबल बल-बंधु चारि बिधि बल पूर्यो पथ ॥
नर पुंडरीक सोहत भए पुंडरीक लज्जा-मयो।
सिर पुंडरीक मनिमय फिरत पुंडरीक कर मैं लयो ॥१०७॥
सोहत हैं घनश्याम धरे बकुलन की माला।
पर-भंजन गति प्रबल हिये चंचला उँजाला ॥
नीलकण्ठ लखि नचत विश्व जीवन निवास सुचि।
मदन-जनक बर ढंग धरे सारंग महा रुचि ॥
औसधि बर बंस उदोत कर सूर सूरता लोप रत।
भे चलत सरन पूरन परन सरी दीह कारन जगत ॥१०८॥
धर्मराज सो पूज्य सूर-कुल मंडन भारी।
सीताधर, प्रिय रूप, धरन नग हरि रुचिकारी ॥
बर पुन्नाग सिँगार जलज धारन पर बलजित।
द्विजबर पूजित सदा कुमार प्रसंसा बरधित ॥
गोबरधन गिरि अरचन करन मुख अंबुज सुग्रीव जुत।
सुरनाथ चले रघुनाथ कै कै हरि जदुपति साथ द्रुत ॥१०९॥

---

१०७ मेचक=श्याम, मोर चन्द्रिका। वृंदारक=अमर, देवता, सुन्दर। विनायक=गरुड़, गणेश, विघ्न। पुंडरीक=सिंह, तिलक, श्वेत छत्र, श्वेत कमल।

१०९ सीता=लक्ष्मी। पुन्नाग=श्वेतकमल।

सह प्रकार भू आप चले रसदायक भक्तन ।
गत बिकार जग बिपति रूप यह कह्यो बिरक्तन ॥
निज हित तजि स्वीकार स्वीय जन करै जु स्यामहिं ।
ताहि देत आकार सहित लय अति अभिरामहिं ॥
चिक्कार सहित पर करि रहत जब सर त्यागत ताकि भले ।
दुसमन बस हित धिक्कार कै ऐहौं यह कहते चले ॥११०॥
नंदात्मज जदुनंद सुभद्रा-बंधु भद्र तन ।
चले जयारथ समर समर-पितु नमत अमरगन ॥
करत परहिं दुख वृद्धि बुद्धि इनसों अतिरिक्ता ।
पूर्णानंदहि देति जनहि तिमि इन पद सिक्ता ॥
अभिराम राम मन मोदकर स्याम मनोहर दाम गर ।
नृप उग्रसैन की सैन मैं सोहे उग्र प्रताप-धर ॥१११॥
चारु नयन बिबि नलिन जुगुल नव करि-कर से कर ।
निरजर जर सों पूज्य निरंजन दृग अंजन धर ॥
बिनती सों परसन्न सदा ती सों प्रसन्न मन ।
बिनसै देखत सत्रु अहै यह सै जाके तन ।
गोपाललाल बपु स्याम घन सोहत लघु कर बृहत बल ।
जेहि भजत बिनायक इकरदन चलत समर बिचलत प्रबल ॥११२॥
सदा नगर-प्रिय रूप आप गर-प्रिय अनंदकर ।
परम नछत्री ख्यात जात छत्री बर बलधर ॥

---

११२ कर=सुंड, हाथ । निरजर=देवता ।

बंधु नकुल के प्रगट सकल कुल के जेहि मानत ।
नमत सबै करि बिनय बिनय मत सबै बखानत ॥
परताप नदीपति अति लसत मुख दीपति अति लसत बर ।
मे चलत स्याम पर बल रनहिं पर बल नरन बिनासकर ॥११३॥
जयरथ चढ़ि जय अरथ अदलधर दलधर सोहत ।
अजन आप जन सुखद अतन सम तन मन मोहत ॥
अपर निरखि परचण्ड अवधि करिकै बधि डारत ।
अही अधिक ही ताकि अगिनि सम गिनि सर मारत ॥
सिर अगर धरन गर धरन पति सत्रु अजय जय मित्र बर ।
मे चलत अकरि करि समर पन रचि मुखमंडल अरचि कर ॥११४॥
बिबुध बंद बुध बंद बिभव धारत भव धारत ।
बिजय रसिक जय रसिक बिहरि रन हरि बल टारत ॥
सुजन बिघन घन हरत बिपुल सर पुल बिस्तारत ।
कटक बिकट कट करत बिडारत भट सर डारत ॥
जनपति जन-बिपति बिनास कर जदु हित बिहित जसै धरत ।
सोहै भट-राट बिराट प्रभु परन बिमुख रन-मुख करत ॥११५॥
पंचजन्य जलजन्य पंचजन-दमन बजायो ।
बिबि कर मुख सों लागि संख अति लस्यो सुहायो ॥

---

११३ गर—प्रिय=एक मादक वस्तु गर जिसको प्रिय है ।

११४ अदल=(फा०) न्याय ।

मनु बिबि कमलन गह्यो मत्त इक सित पारावत ।
तेहि बरबस ते अमल कमल तीजे महँ नावत ॥
तब व्याकुल ह्वै सो बिबस परि करत सोर निज जोर भर ।
इमि लस्यो कंबु दुखहर भजे भजे जाहिं सुनि सडर पर ॥११६॥
देत सुदसरन चक्र सुरथ दहिनी दिसि दरसन ॥
अरिधरसन सो लखत करत प्रानन को करसन ।
बरतुल पर-कुल-हरन महा दुति सोभा छायो ॥
अखिल तेज को आलबाल बिधि मनहुँ बनायो ।
बहु कूट असुर के सैन को कूट कर्‍यो रन मारिकै ॥
श्रुति मग ह्वै सब श्रुति मग भर्‍यो अपनो जस बिसतारिकै ॥११७॥
बाम दिसा महँ लसति गदा कौमोदकि नामा ।
जाने बिधवा करी बिबिध बिधि अबिबुध-बामा ॥
लहिकै जाकी धाक नाक-पुर निवसहिं-सुरगन ।
छबि बरनत कवि लजत ध्यान सों भजत बिघन घन ॥
नगजटित कनकमय बर बनक अति प्रकास दस दिसि भर्‍यो।
बिसुकरमा मनु मानि खंभ पै उडुगन को गोलक धर्‍यो ॥११८॥
बन्यो बाम दिसि चरम परम दुति बरम करम कर ।
पर-बल गरमी समन अपर निसिकर बरतुल बर ॥
सहत सस्त्र बरसात करत कुंठित सबके फल ।
दनुज-बंस को राज उजाड़्यो असि सँग रहि भल ॥
मनि इंदु असित रँग ढाल पैं रतन फूल सह रेहउ लसि ।
मनु बैठो मरकत चक्र चढ़ि चार नखत लै अर्द्ध ससि ॥११९॥

नंदक नामा खग्ग नंदनंदन को राजत।
जासों भाजत दैत देवगन आनँद साजत॥
गंगधार सी धार अमित भट स्वर्ग पठावन।
जमुन बाढ़िसी बाढ़ सूर कर प्रगट सोहावन॥
हरि कर सोहत करबाल बर छबि भाषत कवि जाहिं मुरि।
मनु निकरि चली अरविंद ते दिनकर-किरिन-कतार जुरि॥१२०॥
सोहत सारँग चाप दाप पर को नहिं राखै।
निरगुन कर असु मोछ सगुन के गुन को भाखै॥
बरनि न जावै प्रभा संभु कोदण्ड लजावै।
सर बरसत रव करै जलद मद दूरि भजावै॥
जा माया भौंह बिलास तें होत जात संसार तन।
सो भौंह धरी मनु सुरथ पैं परब्रह्म लीला करन॥१२१॥
किधौं बासुकी-बंधु बासु कीनो रथ ऊपर।
आदि शक्ति की शक्ति किधौं सोहति सूछमतर॥
कै अरि मारन लीक नीक बिधि किय सह परमा।
कालदंड को हीर किधौं काढ़यो बिसुकरमा॥
रविकिरिन किधौं जगमग महत काढ़ि बुझाई गरल तेहि।
हरि बान किधौं सोहत भयो रन जीतन की बान जेहि॥१२२॥
सोहति हरि के पास पास पर मुख-कपास कर।
बाँधे बिना प्रयास त्रास दै जगत कास पर॥
मनि परकास अकास भऱ्यो सज्जन हुलास कर।
सब तन मनि धर मनहुँ लसत मनिधर गर-आकर॥

यह चार अंक सी सोहनी चार सैन माधि पोहनी ।
जुग चार चार श्रुति मैं बिदित मृत्यु-पास मनमोहनी ॥१२३॥
दारुक नामा सूत सुरथ को करत तदारुक ।
जासों मातलि मात अरुन-गति जाति सदा रुक ॥
कर लीने मनि रस्मि रस्मि रहि फैलि अथोरी ।
बिज्जुलता बढ़ि मनहुँ रची बिसुकरमा डोरी ॥
इकहाथ चारु चाबुक लिए पथ रथ पैं छबि छावतो ।
दिनकर-कर-कमल उखारि मनु लिए जात चमकावतो ॥१२४॥
सैव्य, बलाहक, मेघपुष्प, सुग्रीव बाजि रथ ।
जिनकी गति अवलोकि पवन गति मंद होत पथ ॥
चतुर चतुर तर चारु चारजामे जिन ऊपर ।
सजे साज मनिजटित नखत-मंडल मनु भू पर ॥
हींसनि सुनि ही सनि लौं भयनि भजहिं सत्रु चलता धरे ।
हरि-जान लसे कीकान इमि उभय कान उन्नत करे ॥१२५॥
उग्रसैन लै सैन चले बलऐन चैन सह ।
नलिन-नैन जग-जैन मैन मोहन-मातामह ॥

---

१२३ पास=पाश, रेशमी डोरी जिसमें बाँधने के फंदे बने रहते है । मनिधर=सर्प । मृत्यु-पास=यम-पाश ।

१२४ तदारुक=(अ०) प्रबंध । अरुण=गरुड़ का भाई और सूर्य का सारथी ।

१२५ चलता=(फ़ा० चिलतः) जर:,कवच । कीकान=घोड़े । सनि = दिशांत ।

कहि न जाय परताप दाप-धर चाप धरे कर।
आप जगत को बाप थाप मानत जाकी बर ॥
मुख काँति कोटि ससि सम लसत सेत मोछ फहरति है।
मनु फुल्ल कमल के मधि कढ़ी सतगुन लता बिभाति है ॥१२६॥
सिर किरीट अति लसत जटित नव नव कनगूरे।
जहँ लागे नवरतन दिसा तम-हर बर रूरे ॥
नव रंगन की झलक फबै फैली रन अंगन।
लखि लाजत अरि अखिल भरत जदु-हियो उमंगन ॥
कहि जाति न काँति बिभाति जो कवि सिगरे सकुचात हैं।
मनु बसे नवग्रह गृह बिरचि तिनके सिखर दिखात हैं ॥१२७॥
कानन कुंडल लसत जड़े हीरन के भारी।
जिनकी जोति निहारि भए ससि अंबर चारी ॥
तिन पै सोहत अलक सेत अति सुखमा छाई।
मनहुँ सेस की सुता सुधा-हित ससि ढिग आई ॥
नगहीर जटित बखतर बन्यो कहि न जाय सो छबि अघट।
मनु सत गुन को चोला पहिरि चलत भयो सतजुग प्रगट ॥१२८॥
उग्रसैन यह नाम चार आखर को साँचो।
उग्रसैन या सरिस न जग मैं निहचै जाँचो ॥
प्रथम अखर के तजे राहु ससि को सनमानै।
इनके पुरुषा समुझि सभै त्यागै निज बानै ॥
द्वै अखर तजें सों परसपर अरि करि करि रन सों भगत।
तिमि तीनि अखर की त्याग सों और भूम समता लगत ॥१२९॥

सोहत सुबरन सुरथ धनद मंदिर सम ओभा।
जिनमैं रतन बिहंग बने जिहि लखि जग लोभा॥
सिंह–केतु फहरात बात–बस बाढ़ी सोभा।
भारी राजत बिभव लजत भव मन करि छोभा॥
मग चलत चक्र घहरात अति सघन घटा गरजनि अधिक।
लखि कहहिं मगधगन भगहु सब आवत ममभटमृग ब्रधिक॥१३०॥
चँवर, मोरछल, छत्र, बिजन, रविमुखी, पताका।
चहुँ दिसि चाकर लिए करिय किमि बरनन ताका॥
भगतबछल जा संग जगत–जीतन को साका।
सुजस करी दिसि अमल जथा ससि सोहत राका॥
चढ़िचढ़ि बिमान निरजर लखहिं जादव-दल सोभा सरस।
जगमालिक को मालिक चढ़्यो आजु लरन हित धरि हरस॥१३१॥
चहूँ ओर सों चले सबै जादव भट घेरे।
जिमि बृंदारक-बृंद लसत सत मख के नेरे॥
डगत भार सों भूमि घूमि घन घिरे घनेरे।
प्रगट्यो परम प्रताप फिरहिं दुसमन बिन फेरे॥
करवाल लिए रविबाल–दुति तरुन सरिस संगर करन।
नृप बृद्ध चलेउ इमि सुरथ चढ़ि बल समृद्ध परबल-हरन॥१३२॥
जादवपति के चलत सबै माथुर नर नारी।
बोलहिं जय जय सब्द परम मुद–मंगल–कारी॥

---

१३१ अमल=अधिकार। जग–मालिक=श्रीकृष्ण।

चहुँ दिसि बरखहिं दूब फूल फल अच्छत लाजा ।
घंटा झालर संख तूर बाजहिं बहु बाजा ॥
द्विज देहिं असीस अनेक बिधि लेहिं दच्छिना बिबिध धन ।
रथ घेरि पढ़हिं अस्तुति अमल मागध-बंदी-सूत-गन ॥१३३॥
नागराज बहु लसत महा नग अंग बढ़ी छबि ।
तिमि सुजान गन सुखद बक्रधर संग रहे फबि ॥
तिमि पथ पैदल रतन बने बर जादव जय रति ।
तिमि रन बाजी जैन पवन बल आप चपल गति ॥
सोहत निसान असमान लौं जाहिर करत प्रताप ढँग ।
नृप उग्रसैन सोहत भए तैसी सोहत सैन सँग ॥१३४॥

[दोहा]

इहि बिधान चलते भए, उग्रसैन महराज ॥
जिनके दल की छबि निरखि लहत सक्र-दल लाज ॥१३५॥

उग्रसेन-निर्याणं नाम सप्तमः सर्गः ।

---

१३३ अमल=निर्मल ।

८. सर्ग

[दोहा]

उग्रसैन नृप संग मैं सोहत दल चतुरंग ।
को कवि जो छबि कहि सकै होति गिरा-मति दंग ॥ १ ॥

[कवित्त]

सीस पै कलग्गी जग मग्गी जग जोति जाकी
रतन जराए अति राजैं पति रैन के ।
सुंड पैं बिचित्र चित्र चरचे अनेक रंग ।
घंटन के नाद लसैं सूर चित चैन के ॥
'गिरिधर दास' हेम हौदा औ अमारी धरैं
बढ़ी छबि भारी चकचौंधी लखे नैन के ।
परम प्रमाथी पर लोह दहैं भाथी सम
ऐसे बने हाथी साथी उग्रसैन-सैन के ॥ २ ॥
कज्जल सो रंग मोहैं सज्जल जलद जोहि
उज्जल बरन बर रदन सोहावतो ।
झूल मखतूल की कुसुंभन सों बोरी मनो
कुंभन सों धुव धाम कुंभन गिरावते ।
जंभ अरि-वाहन अचंभ भरे जोहि जिन्है
दंभ भरे रंभ खंभ चीरि महि नावते ॥

अकरि अकरि करि डकरि डकरि बर
पकरि पकरि कर सिक्कर फिरावते ॥ ३ ॥
चले गजराज ब्रजराज के दराज तन
सजे रनसाज लजे दिसा-गज मन सों।
सिरन पैं सिरी धरी जामैं रत्न-राजी थिरी
रूप जोहि सत्रु-सैन फिरी डरपन सों॥
'गिरिधरदास' छबि छावते सोहावते हैं
समद दबावते बनेस कों रदन सों।
सेस कों पदन सों, नगेस कों कदन सों,
गनेस कों बदन सों, गजेस कों मदन सों ॥ ४ ॥
तनक चिकारि पर प्रानन निकारि लेत
चलत बिचारि जुवा नारि लौं हरे हरे।
पदन सों बे दरद मरद मरदि डारै
रदन सों करै सैल गरद बरे बरे॥
'गिरिधर दास' सोभाऐन सैन माहिं लसै
तम-गिरि-शृंग मानो रतन जरे जरे।

---

३ मखतूल=काला रेशमी कपड़ा। कुसुंभ=कुसुम, केसर। कुंभ=हाथी का गंडस्थल, मकान पर के कलश।

४ सिरी=एक प्रकार का शिरका आभूषण। बनेस=सिंह। कदन=नाश।

जादो पुंड के बितुंड चित्र तुंड झुंड झुंड
मुंड धरें कुंड सुंड कुंडल करे करे ॥ ५ ॥
बीर रस अंकुर द्वै कढ़े धौं भयानक सो
अति छबि छाके बाँके सेतता के आसपद ।
नीलाचल मैं तें कढ़े सेस के कुँअर किधौं
काढे घन ओट इंदु बिबि कर सोभा हद ॥
तमोगुन बीच किधौं बान द्वै सतोगुन के
लसे अध धसे 'गिरिधर दास' नामजद ।
जलद मैं किधौं बिबि बक की बिसद पाँति
किधौं उग्रसैन-सैन-दुरद के दोय रद ॥ ६ ॥
सुंडा दंड लसै जैसा वैसा रद दरसावै
सोहै ससी सीस भारी सीरी कुंभ पर है ।
भौंह अच्छ मुख स्वच्छ मैगल सोहावनो है
कान अति राजै पीठ सिला ज्यों अपर है ॥
पूछ पूरी सोभा बिचरन नर चपैं दीह
सीकर की चरनन रचना ऊपर है ।

---

५ पुंड=तिलक, टीका । कुंड=लोहे का शिरस्त्राण । कुंडल करे=कुंडलित करना, मोड़ कर गोल करना ।

६ आसपद=आस्पद, घर । नामजद=(फा० नामज़द) नियुक्त ।

तूल झूल लाल तूल लाल तल तूल नौल
डील तूल नील सैल माथ पैं सिपर है ॥ ७ ॥
उन्नत सरीर नीर झरी कों लगावत है
द्विजन की सोभा बढ़ी देखे जात खेद है।
कानन की छबि दीह लसै 'गिरिधर दास'
गरुता अपार जाकी बरनत बेद है ॥
मसतक भाग ऊँचो परसै अकास जाय
मुकुत बसत जहाँ सुजस संपद है।
समर वारे कों देखि होति है समर-रति
नाग मैं औ नग मैं अकार ही को भेद है ॥ ८ ॥

[सवैया]

गजगाह निहारि निगाह पुरै मुकतालर पायन लौं लुटकैं।
कलगी सिर तीन लगी मनि की दुति छाय रही छिति पैं छुटकैं ॥
नग सेतन मैं नग भूषन के इक एक कुबेर हिए खुटकैं।
मुख सिंदुर बिंदु रह्यौ फबि कै नृप-सिंधुर सिंधु रसै घुटकैं ॥९॥

[दोहा]

अंग उतंग सुढंग अति, रंग देखि घन दंग।
सह उमंग अरि-भंग-कर, जंग संग मातंग ॥ १० ॥

---

७ तूल=लाल, कपड़ा विशेष, समान। नौल = नवल, नया।
९ गजगाह = झूल। सिंधुर = हाथी।

[छप्पय]

रूप जोहि घन लजत भजत तिमि बिघन अनेकन ।
तिमि दुसमन-मन सभय नखत बिनवत करि टेकन ॥
ऐरावत-सम बिरद दुरद यह नाम कहावत ।
लघुवत सिर की ओट कछुक लखि परत महावत ॥
भट धरे असी कर मैं चढ़े सीकर सुंडन मैं लसत ।
उन्नत असमान समान तन ऐसे गज जदु दल बसत ॥११॥
जदपि अजन उतपन्न तदपि जन मैं छबि छावत ।
जदपि अंकरिकैं चलत तदपि करि नाम कहावत ॥
जदपि असिल कुल ख्यात तदपि सिल कुल पद नासत ।
जदपि अरंद अरि बधत तदपि रद कांति प्रकासत ॥
सब जदपि अमारी-धर तदपि मारी सम पर-दल घसत ।
अति जदपि अहारी दीह तन तदपि रतन हारी लसत ॥१२॥

[कवित्त]

बने बर बाजी बाजी बाजी कला बाजी करैं
बाजीगर हारैं बाजी बाजी कों लगायके ।
छन मैं प्रदच्छिन करत बाम दच्छिन तत-
च्छिन ही छुवैं व्योम पच्छिन लौं धाय के ॥

---

१२ अजन = अजन्मा, जन्मरहित । असिल = (अ० असल) शुद्ध ।
अरद = रौंदकर । मारी=संक्रामक रोग जैसे प्लेग आदि ।

'गिरिधर दास' भूमि जूमि जूमि आसु बाढ़ि
  बाजलौं दराज लेहिं परन दबाय के।
सरब गरबवंत अरब—अरब ऐसे
  अरब के अरब चरब जदुराय के॥ १३ ॥
स्याम पैं ललाम औ ललामन पैं स्याम ऐसी
  सोभा सुभ सोभित हैं नाना रंग गुल की।
चार चारजामें जामें नग जगमग होत
  फिरै जोत ग्रस सैन सैन बीच दुल की॥
धुनि सत्रु भैजनी करत पाय पैजनी है
  बैजनी लगाम बनी चरम मृदुल की।
पाँति सिंधु मुलकी तुरंगन के कुल की
  बिसाल ऐसी पुलकी सुचाल तैसी दुलकी ॥१४॥
कसे तंग तंग तन अमल उतंग लसे
  बने बहु रंग मति मोहैं सुरासुर की।
संग मैं सईस ते रईस से नफीस बेस
  सीस उसनीस बनी बाम ओर ढुरकी॥
हैकल की छबि कहिबे कों जात दबि
  कवि हरैं कांति रवि पवि कवि सुर-गुर की।

---

१३ बाजी=घोड़ा, लड़ते हुए, दाँव। अरब=इंद्र। बैजनी=(अ० बैजा) श्वेत।

सागर चतुर की त्रिपुर की फिरैया राजी
राजी गति तुरकी सो तुरकी चतुर की ॥ १५ ॥

उछीर झड़का से परत पुनि छक्का से
सड़क्का से भजत नेकु चाबुक खड़का से।
सक्का से सबारै देत जीवन समर सदा
जदुराज बाजी पर-प्रान के उचक्का से ॥
सुमनी लेचक्का से गरुअ हेम थक्का से
प्रहार के धमक्का से करत नाद ढक्का से।
बीर एड़ धक्का से परसि जात अक्का से
जवाहिरन नवका से लगाम लेत लक्का से ॥ १६ ॥

सोहैं बाजि पीन जीन जिनपै नवीन बनी
सीस लगी कलगी रँगीली चितचोर है।
मेरु होत माहिर जवाहिर के भूखन सों
जोति दल बाहिर लौ जाहिर वा ठौर है।
दिसा तम खंडन लसहिं ग्रीव गंडन सों
गंडन पै चित्र शोभा मंडन सुतौर है ॥

---

१५ तंग = घोड़ों की पेटी, दृढ़। नफीस = (फा०) अच्छे। कवि = शुक्राचार्य।

१६ सक्का = (फा०) पानीवाला। ढक्का = नगाड़ा।

पूँजी मनि गूँजी धनपूति पूँजी पूजी चारु
घूँघुरुन कूजी दूजी जा सम न और है ॥१७॥

मुख चारु चारु कान कलगी नकासीदार
नैन सुखमा बनै न कहत सुहावनी ।
गलन गगन लग रहे रुचि चिरु हेर
ठगै कवि-मति पीठ जीन जीव भावनी ।
'गिरिधरदास' तैसी पुच्छ पुष्ट दुमची है
चारु चारुजामे जामे सरस प्रभावनी ॥
सुम सुमती केसे कुसुम सुमनस प्यारे
पद पद पर को बिपद पद बावनी ॥१८॥

चलत सुचाल अनरीत राह त्याग करि
अंबर लौं जात पै सुलभ ज्यों नगीच है ।
जमत असील सीलवंत हिए ध्यान सम
करै अविचार ना निगाह ऊँचे नीच है ॥
'गिरिधरदास' जानि आपनो धरत जाहि
करत निबाह ताको जैसे डोर षींच है ।
बीर धीर मानै पहिचानै करतव्य ताकों
हय मैं औ हया मैं अकार ही को बीच है ॥१९॥

---

१७ पूँजी = समूह ।

[सवैया]

तन गंग से सेत उमंग भरे अति तंग त्यों तंग लगाम तने ॥
भट संग निखंग कसे कटि मैं अरि जंग निहारिके दंग घने ॥
मद भंग पतंग के बाहन को करैं अंग सुडौल सुढंग सने ॥
गति हेरि कुरंग कुरंग फिरैं चतुरंग तुरंग सुरंग बने ॥२०॥

[दोहा]

मनि राजी राजी नवल साजी राजी भाँति ।
छबि छाजी ताजी गुनानि ताजी बाजी पाँति ॥ २१ ॥

[छप्पय]

बिहरत बिबिध प्रकार हरत खग गति मद भारी ।
उछरत नाँघत अगहि लेत गहि इंदु सवारी ॥
अरि कों करत अपाय पाय दल मैं जब धारत ।
अरबी जात कहात रबी को वाहन हारत ॥
यह एक चारजामा धरे राजत रंग बिरंग तन ।
जदु-सैन अरब किमि बरानिए जिनके रव भय मगध-मन॥ २२॥
जदपि अभ्र-मत रंग तदपि बहु भाँति भ्रमत मग ।
संख्या जदपि अनेक तदपि अति नेक बिदित जग ॥
जदपि अही सत बेग तदपि हींसत मन भाए ।
जदपि उलंघत अगन तदपि गन मिले सुहाए ॥
नंहिं जदपि अहै कल समर बिनु तदपि सबै हैकल धरत ।
उडि जात जदपि अगले पदन तदपि गले खम छबि धरत॥२३॥

---

२३ अभ्र-मत = बादल सा नीला ।

[कवित्त]

उग्रसेन-सैन-बीच स्यंदन सुहाए चले
सुखमा कहत कवि रहत बिचार सों।
अवनि सों अंबर लौं अधिक उँचाई फबी
फैल्यो अति जोर सोर झाँझ झनकार सों॥
'गिरिधरदास' बिजै अरथी रथी लसत
सारथी चलावत त्यों चाल न प्रकार सों।
नग मग मग जगमग करैं पग पग
जग डगमग करै नग सम भार सों॥२४॥

ताने असमान लौं बितान जामें सेत रंग
सुखमा महान कैसे गान कीजै छानके।
सारथी सुजान गीरवान सारथी से लसे
श्रीनिधान बाजि लाए बान बेग जानिके॥
'गिरिधरदास' भासमान के समान तेज
बैठे बलवान परधान पन ठानिके।
देवता बिमान सानुमान हानिकारी लसे
अरि जान जान हेतु जान जदु जान के॥२५॥

बिबिध पताका राका राज के से चाका बने
विजय को साका छयो जग अधिकाइ के।
छतरी सोहाई घनी मनी सों जराई बनी
कनक के कलसा छजत छबि छाइके॥
'गिरिधरदास' तैसी धूरी काँति पूरी लसै

बिजुरी दुरी फिरति जासों सकुचाइ के।
सुखमा अकथ अरि अरथ बिरथकारी
सोहे पथ रथ समरथ जदुराइ के ॥२६॥

किए हेम दंडन पैं मंडन बिचित्र चित्र
बने कीर मोर चार ओर मन भावने।
कूबर अनूप रूप छतरी छजत तैसी
छज्जन मैं मोती लटकत छबि छावने॥
'गिरिधरदास' सोहे बीर रस मंदिर से
बैठे जहाँ बीर सत्रु धीरज बहावने।
नंदन प्रधान जान मंद के निकंदन यों
बने नंद-नंदन के स्यंदन सोहावने ॥२७॥

सोहते सवार सरदार जे दिमागदार
जुद्ध माहिं क्रुद्ध जे अडग्ग ठहरात हैं।
सारथी लसत जय-स्वारथी प्रवीन तैसे
छन छबि ऐसे कर कोरा छहरात हैं॥
'गिरिधरदास' तैसी झुरमुट झाँझन की
भार भरे भूरि भूमिधर थहरात हैं।
पुर बहरात घन सम घहरात रथ
धुज फहरात देखि अरि हिए हहरात हैं ॥२८॥

---

२७ नंदन = स्वर्ग का बाग।

पैया चार खरचि रुपैया रुचिर खरचा
रतन जराव साथ थल बैठकी कोबर।
रहे फबि खंभ चार रवि-सम तेजदार
रथ को निहारि पथ थकै कवि मतिधर॥
'गिरधरदास' दिव्य सिंधु जालौं धुजा लौकं
छत्र औ कलस सजै छतरी की छत पर।
थर थर थर थर करैं अरि धुरी देखि
तिनके धुजन बैठि करहिं कुर रर रर ॥२९॥
बात-गति साँची चाल चलते हैं लीक खाँची
आपने की कान सदा राखत बिचार को।
जाति के रतन परकास जगमग करैं
धीर के अधार साधे सूत व्यँवहार को॥
'गिरिधरदास' भूमिचक्र ख्याति धारत है
गुरु पाय धूरी अति लहैं सोभा सार को।
गरिमा के आकर धरत सुबरन सुद्ध
सुजन सुजान माहिं भेद है अकार को ॥३०॥

[सवैया]

कूबर कंचन रत्न जराव के घूँघुरू झाँझ बजैं बर छंदन।
आसन सूरन के जिन पैं छियो सूरज मंडल छत्र बिलंदन॥

---

२९ कुर = गिद्ध की एक जाति।

चालत नाद करैं 'गिरिधारन' सावन मेघ के मान-निकंदन।
बीर अनंदन सत्रु के कंदन सोहै घने नँदनंदन-स्यंदन ॥३१॥

[दोहा]

लसत बिमान समान सुभ जदु-प्रधान के जान ॥
सान-निधान निसान जित छुअत भान असमान ॥३२॥

[छप्पय]

अरि बिपता के करन उच्च फरहरहिं पताके।
बिबिध नछत्र-समान छत्र नभ लसत बिभा के ॥
चलत समद जिमि बाज करत अतिही अवाज मग।
गरुता अचल समान चाल चल करत अखिल जग ॥
नृप उग्रसैन नौकर चढ़े दोउ कर सस्त्र फिरावते।
मागध-मन-इच्छा बिरथकर जदुबर रथ छबि छावते ॥३३॥
जदपि अवाजी परम तदपि बाजी सों छाजत।
अघटित सोभा जदपि तदपि मनि घटित बिराजत ॥
जदपि अपच्छी-दमन तदपि पच्छी सम धावत।
जदपि करत प्रभु-अरथ तदपि रथ नाम कहावत ॥
दुख अध्वज नित नासत जदपि तदपि लसत ध्वज नितहि अति।
आसीन अदल करता जदपि तदपि संगदल बिजय रति ॥३४॥

---

३१ कूबर = रथ का वह भाग जिस पर जूआ बाँधा जाता है।

३३ अचल = पहाड़।

३४ अवाजी=शब्द करनेवाला। अध्वज=ब्राह्मण। अदल=(अ०)न्याय।

[कवित्त]

बखतर धरे जामें जरे हैं जवाहिरात
सूर-पन भरे धाम गरब अथाह के।
तीर, तरवार, भाला, बरछी, बँदूक हाथ
आयस के कुंड माथ करन पनाह के॥
'गिरिधर दास' बीर बली। गरजत जंग
मागध के साथी भगैं करत निगाह के।
अरि जय-चाह चले संगर उछाह रले
बिबिध सिपाह हमराह जदुनाह के॥३५॥

आँख रँग राती मनो अमल सों माती नहिं
छबि कहि जाती सकुचाती गिरा ह्वै कै दंग।
चलैं करि-पाँती जैसे घन बरसाती तैसी
गाजनि सुहाती परछाती फटै काने जंग॥
'गिरधरदास' रन राती मति सरसाती
जदुपति-नाती की भगति दरसाती अंग।
सायक निपाती चतुरंग के सँघाती ऐसे
सोहत पदाती अरिघाती उग्रसैन-संग॥३६॥

परिकर कसे कटि जबर समर-हेत
हाथ चाप बान बने भारी पौनगति के।

---

३६ अमल=नशा।

बोलैं 'धरु मारु' सत्रु-विजय बिचारु हिए
देखि रूप बलीहू मिलत साथ नति के ॥
'गिरिधरदास' चाल चलैं मत्त ब्याल की सी
गरब निकास डारैं दुसमन हति के ।
बत्ती बटि कसी पाग कत्ती सिर टेढ़ी लसै
बढ़ी सुख रत्ती ऐसे पत्ती जदुपति के ॥ ३७ ॥

समर बिहारी सुर-सम बलधारी धीर ।
मल्ल जुद्धकारी औ सिंगारी भट भेस के ॥
मृगपति मारी बली-बृंद के बिहारी जानै
सस्त्र-घात सारी अहँकारी सब देस के ॥
लरन तयारी लौ प्यारी 'गिरधरदास'
सायक-प्रहारी तरवारी बल बेस के ।
अरि-मद हारी धरे परिघ कटारी हाथ
सोहे इमि भारी पदचारी मथुरेस के ॥ ३८ ॥

सैन धीर-धुर की चतुर. की समर हेत
देनि भै प्रचुर की अपर ओर ढुरकी ।
खानि सीनि ढुरकी फिरति पाँति सुरकी हैं
लए चालि तुरकी निगाह किए पुर की ॥
साल अरि-उर की है आँखि लाल जुरकी सी
लाजै महाउर की है कांति महा मुरकी ॥

छुर की सी धार लगै घुरकी करत बार
होति हाहा सुरकी जमाति बहादुर की ॥ ३९ ॥
केस कान गाल अच्छ मुख नाक भाल अच्छ
सीस उसनीस सनी सउख कलग्गी अच्छ ।
बाजू मध्य बाजू कंठमाल मध्य मनि अच्छ
इक कर करवाल दूजे कर ढाल स्वच्छ ॥
आयस को कवच त्रिजामा सम जामा सम
आयस को कवच त्रिकाल पढ़ैं काल भच्छ ।
उग्रसैन परिकर कसे करि परिकर
सोहै धीर आसपद पदचर जय-लच्छ ॥ ४० ॥
गरजन घोर जोर पवन चलत जैसो
अंबर सों सोभित रहत मिलि के अनेक ।
पत्र जे धरत तिन्हैं तोषत हैं भली भाँति
सूर सूरताई लोप करत सहित टेक ॥
जीवन हरत बरसत धनु धारत हैं
इत उत धावत हैं उचित लिए विवेक ।
भादौं के पयोदन मैं जादौं के पयादन मैं
'गिरिधरदास' है अकार ही को भेद एक ॥ ४१ ॥

[सवैया]

एक सों एक गरूर भरे रन सूर धरे कर खग्ग कटारी ।
कम्मर माहि पटूको कसे बर सम्मर मैं अरि मान के हारी ॥

---

३९ जुर=(फा०जुर्रः) एक प्रकार का अहेरी पक्षी । मुरकी=फिरकर ।

सीस पै टेढ़ी धरी पगरी 'गिरिधारन' ईस के आनँदकारी ।
बादल-बृंद प्रभादल सोहत पैदल के दल की छबि भारी॥४२॥

[दोहा]

चलत करत झलमल कवच हलचल अरि संदोह ॥
पल पल बलकल बल मदहिं पैदल बल इमि सोह ॥४३॥

[छप्पय]

लरत सौंह जो आय निधनु तेहि करत सधनु कर ।
चलत जबै रन-हेत तबै बिचलत लखिकै पर ॥
लहि दल-भार बिसेस सेस सिर झुकत जब्बर बर ।
लखि छबि रंचि बिरंचि चाकित चित होत चतुर तर ॥
कैसे कोउ बरनन करइ बुध बिबुध-बृंद मन लाजते ।
मागध-नृप-सैन-बिपत्तिकर जदुपति-पत्ति बिराजते ॥४४॥
मधि रन अकरत जदपि करत निज घात तदपि बढ़ि ।
जदपि अवाज अधीर तदपि उर धीर रह्यौ मढ़ि ॥
जदपि अपर बल हरत तदपि परबल कहवावत ।
असि रन धारत जदपि तदपि बहु सिरन उड़ावत ॥
अरि सौंह जदपि बिक्रम अडग तदपि पैतरन धरत डग ।
जुग लोचन जदपि अबीर रँग तदपि बीर बिख्यात जग ॥४५॥

[दोहा]

साजि चतुरबिधि सैन इमि जदुपति चतुर सुजान ॥
चलत भए संगर करन सुमिरि हिए भगवान ॥ ४६ ॥

उग्रसैन-चतुरंग वर्णनं नाम अष्टमः सर्गः ।

९. सर्ग

[चौपाई]

जब रन काज चले जदुराजा । तब अनेक बिधि बाजन बाजा ॥
तेहि छन बिजय चिह्न प्रगटावत । भए सगुन मंगल मनभावत ॥ १ ॥
मृगन कियो नृप सुरथ प्रदच्छिन । सो लखि सबन गुन्यो बिधि दच्छिन ॥
मृदु समीर पाछे सों लाग्यो । बिदा करत जय हित अनुराग्यो ॥ २ ॥
नीर भर्‍यो घट सन्मुख आयो । सो लखि नरपति नैन जुड़ायो ॥
दधि अरु मीन सुमन की माला । लिए मिल्यो मग मैं नर आला ॥ ३ ॥
बृद्ध बिप्र सित अंबर-धारी । आय असीस दई रुचिकारी ॥
दच्छिन भुज अरु लोचन फरके । दुखमोचन जयप्रद जदुबर के ॥ ४ ॥
हिए उमंग जंग को बाढ़ो । जातहि मारि लेत अरि गाढ़ो ॥
सुंदर सैन ब्योम-मग आया । नृपति छत्र पैं कीनी छाया ॥ ५ ॥

[दोहा]

इमि अनेक मंगल निरखि प्रमुदित चित मथुरेस ॥
जाहु लरन सब द्वार पैं बीरन दियो निदेस ॥ ६ ॥

[जैकरी]

सुफलक, सारमेय, अक्रूर । मृदुजित, मृदुर, सुकर्मा सूर ।
गिरि, आसंग, बीर प्रतिबाहु । गंधमाद, सत्रुघ्न सचाहु ॥ ७ ॥
धर्मबृद्ध, अरि-मरदन बीर । छत्रापेक्ष परम रनधीर ॥
सत्राजित, प्रसेन भट-कंत । सिनि, सत्याकि, सात्यकि मतिमंत ॥ ८ ॥

आहुक, पृथु अरु बिपृथु उदार । जाहिं लरन हित पच्छिम द्वार ॥
कृतवर्मा, सतधन्वा ख्यात । देवक, देववान भट-तात ॥९॥
अरु उपदेव, सुदेव सुजान । बहुरि देववरधन बलवान ॥
बभ्रु, सूर, बसुदेव प्रवीन । आनक, देवश्रवा मति-पीन ॥१०॥
देवभाग, सृंजय अरु कंक । वृक, समीक, स्यामक रन बंक ॥
चित्रकेतु, इखुमान, सुबीर । पुरजित और सत्यजित धीर ॥११॥
ए सब समर-हेत सजि सैन । उत्तर द्वार जाहिं मति ऐन ॥
रितधामा, अरजुन, बसुहंस । बान, तच्छ, उरुवल्क सुबंस ॥१२॥
गद, सारन, कृत, दुर्मद भूत । बिपुल, सुभद्र, भद्र मजबूत ॥
भद्रबाहु, स्रम अरु उपनंद । नंद कृतक केसी बलकंद ॥१३॥
सूर हस्त, हेमांगद चंड । पूरब द्वार जाहिं बरिबंड ॥
दुरमरसन, जय कंचन अच्छ । बृख, हरिकेस बृहत बलदच्छ ॥१४॥
पुसकर, वत्सक, साल्व, सुमित्र । कल्पवर्ष रन चित्र चरित्र ॥
संभु, विपृष्ठ, प्रतिश्रुत बीर । उद्धव, ध्रुव, हलधर रनधीर ॥१५॥
स्याम आदि सँग लै सरदार । हम रन जैहैं दच्छिन द्वार ॥
घेरी पुरी जरासुत आय । ताहि मारिहैं सहित सहाय ॥१६॥

[दोहा]

इमि अज्ञा दै भटन कों जदुबंसी–सरदार ।
चार भाग करि सैन को रोक्यो चारहु द्वार ॥ १७ ॥

[सोरठा]

ता छन जादव क्रुद्ध संखनाद करि गरजिकै ।
भए अरंभत जुद्ध मगध महीपति भटन सों ॥ १८ ॥

[कवित्त]

भल्ल लगे चमकन खग्ग लगे झमकन
सूल लगे दमकन तेग लगे छहरान ।
पट्ट लगे लरजन चाप लगे गरजन
गोला लगे पर-जन प्रान लैकै बहरान ।।
चर्म लगे ठनकन बर्म लगे झनकन
कुंड लगे खनकन अस्त्र लगे भहरान ।
धौंसा लगे घहरान संख लगे हहरान
छत्र लगे थहरान केतु लगे फहरान ।। १९ ।।
डाँटै लगे रन नाथ छाँटै लगे पर साथ
काटै लगे धर माथ कोप पूरि तौन छन ।
गिरै लगे अंग खंड थिरै लगे जंग मंड
घिरै लगे संग चंड भूत प्रेत मोदि मन ।।
झूमै लगे गाजि गज घूमै लगे बाजि ब्रज
जूमै लगे साजि मजबूती पत्ति ठानि पन ।।
जूटै लगे जान-गन ऊटै लगे ज्वान जन
छूटै लगे बान घन लूटै लगे प्रान तन ।।२०।।
कर पग छटै लगे सिर उर फटै लगे
हय गय कटै लगे पुहुमी पै पटै लगे ।
स्यार कठ कटै लगे सबन सों डटै लगे
अंग खंड तटै लगे सोनित को चटै लगे ।।
देखि भीरु लटै लगे मन मन घटै लगे

पीछे पग हटै लगे क्रम क्रम नटै लगे ।
सूर बढ़ि सटै लगे मारु मारु रटै लगे
चार ओर अटै लगे जुद्ध ठाट ठटै लगे ॥२१॥

[दोहा]

इमि अरंभ रन को भयो मथुरा चारहु द्वार ।
मागध-जादव-भट उमड़ि कराहिं परस्पर मार ॥ २२ ॥

[कवित्त]

सुंडन उठाए फिरैं धाए घन घन सम
बैठे असवार मिलै मुदित पतंग संग ।
गरजैं गरारे कजरारे अति दीह देह
जिनहिं निहारे फिरैं बीर करि धीर भंग ॥
'गिरधरदास' बलधर कर सिक्कर लै
करत हैं घात बिज्जुपात लौं सुढंग जंग ।
मरजी महावत की मानि महामदमत्त
मरदि मरद महि मुरदा करैं मतंग ॥२३॥
बाजि के सवार केते आजि बीच डोलि रहे
साजि रन साज दीह गाजि पन रोप सों ॥
मारि तरवारि प्रान पर के निकारि लेत
भल्ल डारि भरैं भूमि स्रोनित के ठोप सों ।
जहाँ जात जूटि तहाँ टूटि परैं बादर लौं
ऊटि बल भट सीस कूटि डारैं छोप सों ॥

टोप धर गोप गर बिज्जु ओप लोप करैं
कोप भरे तोपखनो तोप लेवें चोप सों ॥२४॥

धावैं धीर रथी रन पथी कोप पूरि पूरि
केतु फहरात तासों दूरि सों दिखाई देत ।
आयुध को पात बरसात लौं करत जात
लगे जाके गात ताको तुरत परात चेत ॥
नाम को पुकार ललकार करैं बार बार
इत उत घूमन सों मरदैं समर खेत ।
बहल की चहल पहल सों दहल केते
जम के महल जाहिं सहल टहल हेत ॥२५॥

सुभट पदाती अरि छाती दुहूँ ओर झुके
उड़ी रज जोर जासों छाय गयो मारतंड ॥
धरु धरु मारु मारु सबद अपार फैल्यो
इत उत चहुँ पर-पृतना करैं बिहंड ।
'गिरिधरदास' तीर तुपक तपंचा लिए
लैं बहु भाँति बास-धार बरसैं अखंड ॥
करैं सत्रु खंड बरिबंड चंड खंड दैके
जलधि घमंड कोऊ मंड ब्रहमंड मंड ॥२६॥

---

२४ आजि = युद्ध, संग्राम ।

२६ पृतना = सेना । बिहंड करना = मार काट करना, नष्ट भ्रष्ट करना । बास = वे तेज धार के लोहे के टुकडे जो तोप आदि मे भर कर फेके जाते है ।

गाँठ कहँ धरे कंठ काटत हैं वे प्रयास
परम कठोर सबै कोमल न एकहू ।
रक्त रंग अंग सोहै गरम सुभाव सदा
सीतल न होत घन कर अभिसेकहू ॥
'गिरिधरदास' गुनमय जन्म धरनी मैं
पीवर बिसाल धरे गुरुपन टेकहू ।
महाबलकंद के सिरोमनि कहावत हैं
सूरन औ सूरन में भेद है न नेकहू ॥ २७ ॥

[छप्पय]

कर तेगा खर धार गहे धावैं घन गाजैं ।
चमकैं ज्यौं छन छटा जग्ग मग्गी झर साजैं ॥
टरैं हेरि ठगि सत्रु डरैं उर दप्पैं नैना ।
तन बाढ़ै थरथरी दबैं दूरै धरि चैना ॥
नर बर परकासी फबनि सों बल कहिं भर मन मरन को।
यह बिधि रन माच्यो लयजथा वह छन सब असु हरन को२८

[दोहा]

ता छन आए देवता समर लखन चढ़ि जान ।
परम सब्द दुहुँ ओर को पूर्यो सब अस्थान ॥ २९ ॥

[कवित्त]

बारन चिकार करैं बाजि हीसैं बार बार
गरजैं सवार रोबदार घन-अनुहार ।

सुरथ हजार माहिं झाँझ करैं झनकार
    बीर ठोकैं तार सरदार करैं ललकार ॥
'गिरिधरदास' बान धार बरसा अपार
    धनुख टँकार लोह सार सस्त्र को अहार ।
चार ओर मैं पुकार बेसुमार मार मार
    सोर सुने पारावार बार धरे हार भार ॥३०॥
संख सब्द घोर घनघोर घने घंटन को
    झालर की झुरमुट झाँझन की झनकार।
ढोलन की बोल तैसी गरजनि ढक्कन की
    तुरही की नाद करनालन की ललकार ॥
बाजनि नफीरी की नफीस 'गिरधरदास'
    सुर सहनाइन की मरफन की पुकार ।
बाजन अवाजन को कहाँ लौं गनावै कोऊ
    धमकनि धौंसा की धुकारन की धुधुकार॥ ३१ ॥
काँप्यो ब्रह्म अंड दोऊ भट्ट के सँघट्ट भय
    देखिकै बिधाता बुद्धि ह्वै गई उचाटी सी।
तुमुल प्रहार सों पुहुमि पपरी सी टूटै
    प्रलय पयोधि मिलै पना परि पाटी सी ॥

---

३१ ढक्का = नगाड़ा । करनाल = नरसिंहा । धुकार = नगाड़े का शब्द ।

ओला से गिरी गुलाबजामुन से दिसा करि
बिहरै सुमेरु कटि बाफ भरी बाटी सी।
फूटि जाय फन फनीराज की समोसा सम
फटि जाय कच्छप की पीठहू मेवाटी सी ॥३२॥
दोऊ दल दुसह प्रहार देखि सोचें देव
कैसे यह जग आजि आफत सों छूटिहै।
पाय की धमक पाय पत्ता सम फटै भूमि
छत्ता सम सेस फन छन माहिं टूटिहै॥
कच्छ पीठ कोहँड़ा सी कोल डाढ़ ककरी सी
दिग्गज को कुंभ खरबूजा सम फूटिहै।
बूट के केदार सम लूटिहै त्रिलोक काल
पुरवा के फूट सम ब्रह्म अंड फूटिहै॥

[दोहा]

इमि बिचार सुर करहिं मन संसय हिए अपार।
हरन चहत महि भार हरि यह तो बढ्यो खभार॥ ३४॥

[सोरठा]

इतनेइ में रन ठौर रुधिर नदी प्रगटत भई।
गज हय सुभट करोर छिन्न अंग व्है व्है गिरे॥ ३५॥

---

३२ मेवाटी = मेवा भरा हुआ एक पकवान विशेष।

३३ बूट = चने के हरे पौधे। केदार = कियारी।

[कवित्त]

प्यार भरे बलकैं सियार चार दिसा माहिं
मुद पारावार बढ़्यो रन उदयो मयंक।
स्वान के समूह रक्तपान के गुमान भरे
डोलत मैदान जैसे त्रेता भयो साज लंक॥
सिद्ध सो समृद्ध पाय सिद्ध से अघाय रहे
केते परसिद्ध सब अंगन को करैं फंक।
धनी भए रंक से असंक देत हंक बंक
बैठे पल-पंक बीर अंक परजंक कंक॥३६॥
संग प्रेतमंडली उमंड फिरै मंडल लौं
उद्धत उदंड ब्रह्मअंड की बिहंडनी।
कटे कुंड कुंडल सिंगारै गंड पुंडन पै
कटि मैं भसुंड सुंड दंडन की मंडनी॥
कादर को छंडि बरिबंड लोहू पान करि
रुंडन पै बैठि तुंड ज्वाल माल छंडनी।
घूमत घमंडी भट खंड झुंड मंडी माहिं
चंडी परचंड चंड मुंड मुंड खंडनी॥३७॥

[दोहा]

इमि संगर सोभा निरखि हरखे सूर सुजान।
चढ़्यो बीर रस औरहू लगे करन घमसान॥ ३८॥

---

३६ पल = मांस। कंक = एक मांसाहारी पक्षी।

[कवित्त]

सूर बलपीन छत्र धरम असीन धीर
परम प्रवीन साजैं रन पन ठान सों।
सुरथ मतंग बाजि बीर अंग भंग करैं
जंग भूमि भरैं सूल सक्ति तेग बान सों॥
'गिरिधरदास' कैसे तिनकी बड़ाई कीजै
दोऊ लोक जीति जस लियो जिन मान सों।
प्रान हान होत पाय भान के समान देह
जान बैठि जात गीरवान थान सान सों॥३९॥

त्यागत सरीर बीर दिव्य देह पावत हैं
होति अंग अंगनि मैं सोभा अधिकाई है।
गंधरब अप्सरा बिमान लिए ठाढ़े रहैं
तुरत चढ़ावैं गावैं बिबिध बधाई है॥
धावैं पहुँचावैं देवधाम फेरि फिरि आवैं
उपमा कहत कविमति सकुचाई है।
मनो सूर-पूजन के ताक पाकसासन ने
नाक औ लराई बीच डाँक बैठवाई हैं॥४०॥

सत्रु के झमेला बीर पाय शस्त्र ठेला प्रान
त्यागि अलबेला तन लहै काम चेला सो।
कोऊ कुंद बेला कोऊ भूखन नवेला धरे
कोऊ पाग सैला कोऊ सजै साज छैला सो॥

---

४० नाक = स्वर्ग। पाकसासन = इंद्र।

कोऊ खाय एला कोऊ चहै रन खेला जान
चढ़ै संग भेला कोऊ रलै नारि रेला सो ।
कोऊ करे हेला कोऊ चलत अकेला लागि
रह्यो तौन बेला औनि अंबर लौं मेला सो ॥४१॥

[दोहा]

इमि संगर माचत भयो मधुबन के सब ओर ।
मारु मारु धरु धरु सबद पूरयो जोर अथोर ॥ ४२ ॥

युद्धारंभोनाम नवमः सर्गः ॥ ९ ॥

---

४१ एला = लायची ।

१०-सर्ग

[सोरठा]

तेहि छन पच्छिम द्वार दुहुँ दिसि के सरदार बढ़ि ।
करन लगे अति मार इक इक को ललकार करि ॥ १ ॥

[जयकरी छंद]

सुफलक जादव नैन तरेरि । भिरत भयो वाल्हीकहिं टेरि ॥
सोमदत्त कौरव कुल-कंत । सिनि के सँग बढ़ि भिरयो तुरंत ॥२॥
सत्यक भूरि परम बलवान । मिलि रन तजे अनेकन बान ॥
भूरिश्रवा सात्यकि के संग । अद्भुत बिधि सों कीनो जंग ॥३॥
सल बलवंत प्रसेन हँकारि । अमित भाँति सों कीनी मारि ॥
सत्राजित उतमौजा साथ । समर कियो करि लाघव हाथ ॥४॥
जुधामन्यु अति मन्यु-निधान । पृथु सँग लरत भयो धरि सान ॥
कौसलपति सँग बिपृथु प्रचंड। रन कीर परम पराक्रम मंड ॥५॥
सल्य महीपति आहुक बीर । भिरिकै तजन लगे बहु तीर ॥
छत्राप्रेच्छ प्रबल मति सुद्ध । बृहतछत्र सँग ठान्यो जुद्ध ॥६॥
अंग महीप सरासन तानि । भिरो सुकर्मा सँग रिसि सानि ॥
बंग नृपति अरु मृदुर प्रवीन । मिलिकै समर रंग भरि कीन ॥७॥
मृदुजित सों कालिंग को भूप । भिरि रन रच्यो भयानक रूप ॥
नृप किंपुरुष परम बलधाम । किय आसंग संग संग्राम ॥८॥
गिरि नामक सुफलक-सुत जौन । द्रुम महीप सों अरुझ्यो तौन ॥
चेकितान मानव-भरतार । सारमेय सँग ठानी रार ॥९॥

पौंड्रक बासुदेव असि-सूर । ता कहँ टेरि भिरो अक्रूर ॥
आन्हृति नृप को नाम पुकारि । गंधमाद झगरयो धनु धारि ॥१०॥
कैसिक नृप अति बिक्रमवंत । अरिमरदन सँग भिऱ्यो तुरंत ॥
धरमबृद्ध गोनर्द महीप । लरन लगे रथ जोरि समीप ॥११॥
संभु महीप महा सहजोर । किय सत्रुघ्न संग रन घोर ॥
जादव भट प्रतिबाहु उदार । भिऱ्यो अनामय सँग ता बार ॥१२॥

[दोहा]

द्वंद जुद्ध करते भए इमि दोउ दिसि के भट्ट ।
रन मारग भरि मारगन काटे हय गय ठट्ट ॥१३॥

[चौपाई]

सुफलक बढ़ि निज धनु टंकारयो । बीस बान बाल्हीकहिं मारयो ॥
तब कुरु-बृद्ध जादवहि डाँट्यो । निज सर सों पर-सर कहँ काट्यो ॥१४॥
ते दोउ लरत लसे तहँ कैसे । लरत बृद्ध बिबि बनपति जैसे ॥
पुनि सुफलक बत्तिस सर मारे । चले सरप सम बिषधर भारे ॥१५॥
धसि कौरव-तन सोहे कैसे । भो अंकुरित बीर रस जैसे ॥
तब सकोप बाल्हीक प्रचारयो । सत सर जादव को तकि मारयो १६॥
ते रथ के सब दिसि मैं छाए । मनु कर आए सूर पठाए ॥
धरि असि सुफलक तिन कहँ खंडे । परे ब्याल जिमि गरुड़ बिहंडे १७॥
काटि बिसिख बोल्यो यह बानी । हम सुफलक जगख्यात गुमानी ॥
सुफल करैं कारज जो मंडैं । आजु लेत जय तुव बल खंडे ॥१८॥
तब बाल्हीक कह्यौ हँसि ऐसे । तुम प्रवीन अस कहहु न कैसे ॥

बहुदिन सुफल कियो महि कारज। फलक जाहु अबजदु-कुल आरज १९

तहँ को काज सुफल सब कीजै । पिता पितामह मन मुद दीजै ॥

इमि कहिकै दोउ विक्रमसाली । लरत भये धरि लोचन लाली ॥२०॥

[तोमर]

सिनि सोमदत्त प्रचंड । रन कीन पूरि घमंड ।

जदु बीर नैन तरेरि । उर भल्ल मारेउ हेरि ॥ २१ ॥

लखि ताहि कौरव बीर । मधि ताकि त्यागेउ तीर ॥

बिबि खंड ह्वै बर भल्ल । गिरतो भयो रनथल्ल ॥२२॥

निज भल्ल खंडित देखि । सिनि बीर जुद्धहि तेखि ॥

धनु तानि बत्तिस तीर । उर में हन्यो रनधीर ॥२३॥

तब सोमदत्त सुभट्ट । मुरुछा लही रन झट्ट ॥

पुनि चेति चाप टँकारि । सर त्यागि दीन प्रचारि ॥२४॥

किय गात छेदि प्रवेस । तब भो कलेस बिसेस ॥

सहि लीन यों जदुबीर । जिमि दुष्ट बातहिं धीर ॥२५॥

सिनि नै कही यह बात । तुम सोमदत्त कहात ॥

किय नाम मैं कुरुछत्र । बिबि अत्रिपुत्र इकत्र ॥२६॥

दुरबास देहु मिलाइ । सब बंसही होइ जाइ ॥

कह सोमदत्त सुजान । मम बैन को करु कान ॥२७॥

---

१९ फलक = (फा०) आकाश ।

२६ अत्रि-पुत्र = अत्रि के तीन पुत्र दत्त (दत्तात्रेय), दुर्वासा और सोम थे जिनमें दो का नाम मिलकर सोमदत्त हुआ ।

निज नाम दै उलटाइ । तिय सोम की होइ जाइ ॥
नहिं दत्त सों कछु काम । करु प्रीति मो अध नाम ॥२८॥
इमि भाखि कै रनधीर । पर पैं तजे बहु तीर ॥
तिमि कोपि जादव चंड । बरस्यो नराच अखंड ॥२९॥

[मोदक छंद]

सत्यक भूरि भिरे दलसों कढ़ि । सायक छाय दियो रिसि सों मढ़ि ।
भूरि कहै हम भूरि कहावत । तो बल अल्प नहीं मन आवत ॥३०॥
सो सुनि सत्यक जादव मंडन । दीन जवाबहि शत्रु बिहंडन ॥
भूल अहै तुव नामहिं के महँ । कीन भकार धकार चहै जहँ ॥३१॥
सत्य कहै हम सत्य कहैं तोहि । जीवत जाय न तू लहिकै मोहि ॥
यों कहिकै दोउ जादव कौरव । जुद्ध लगे करिबे धरि गौरव ॥३२॥

[तोटक]

भट सात्यकि भूरिश्रवा रन मैं । अति बिक्रम कीन तिहीं छन मैं ॥
सर, सूल, कृपान, गदा तजिकै । दोउ जान भरे सनकैं भजिकै॥३३॥
सुक पंजर के मधि बंद जथा । दोउ सोहत सत्रन बीच तथा ॥
पुनि आयुध काटि कढ़े बल सों । जिमि सिंह कढ़े घन जंगल सों॥३४
तब सात्यकि बात कही बढ़िकै । कुरु बीर निहारु हमैं पढ़िकै ॥
तुव अग्रज भूरि कहावत ज्यों । तुम भूरि अहौ सरवा पुनि क्यों ॥३५
तब भूरिश्रवा इमि बात कही । कहु जुक्ति कहाँ यह पास लही ॥
मम पुत्र कियो तोहि सिस्य सही । मोहि यों बरनै तोहि लाज नहीं॥३६
इमि सात्यकि उत्तर तासु करो । गुरु के गुरु जौं किहि हेतु लरो ॥
तब ते दोउ धर्म बिचारि खरो । किय सायक की बरसात बरो ॥३७॥

[गुरु तोमर]

सल औ प्रसेन पुकारिकै। लरते भए धनु धारिकै ॥
पर सैन सों पर सैन कों। पठवै लगे जम-ऐन कों ॥३८॥
सल त्यों अरीदल साल है। किय नास बीरन-काल है ॥
लखि सो किते दुहुँ ओर सों। टरिबे लगे रन ठोर सों ॥३९॥
सल बीर कोप पसारिकै। कहतो भयो ललकारिकै ॥
सल नाम मों गुरु नै किया। सल देत हौं अरि के हिया ॥४०॥

[दोहा]

सुनि प्रसेन बोलत भयो कहा बकत बस बायु।
तू सल मैं जादव असल छन महँ करत गतायु ॥४१॥

[रोला]

उत्तमौजा भिन्यो सत्राजीत जादव संग।
तजन लाग्यो बान जैसे चलैं छुधित भुजंग ॥
ठोकि ताल बिसाल भूपति लाल कीने नैन।
कहत जदु-कुल-सुभट सों उर महत रिसि धरि बैन ॥ ४२ ॥
उलटिकै निज नाम सत्राजित समर करु अत्र।
नतरु सुधि मम मार की करि भागु द्रुत अन्यत्र ॥
कहत जादव बीर उतमौजा अहै तुव नाम।
उलटि अपनो नाम तैहूं बास करु तेहि ठाम ॥ ४३ ॥
भाखि या बिधि उभय भय तजि चाप कों टंकारि।
दोउ दल मैं तजे सायक कोउ लहत न हारि ॥

काटि कुंडल कुंड मुंड बितुंड झुंडन खंडि ।
भरी धरनी समर की सोनित सरित रहि मंडि ॥ ४४ ॥

[अड़िल्ल]

जुधामन्यु पृथु बीर गाज सम गाजते ।
दोऊ लै समसेर सेर सम बाजते ॥
आपुस में बहु भाँति तरेरहिं नैन कों ।
मारु मारु धरु मारु पुकारत बैन कों ॥ ४५ ॥
ता छन खग्ग प्रहारि महीपति रीस सों ।
काटि दियो पृथु–केतु गिर्‌यो महि सीस सों ॥
सो लखि जादव बीर तजी असि डाँटिकै ।
भूप–सारथी–सीस दियो द्रुत काटिकै ॥ ४६ ॥
सूत बिगत हय फिरन लगे सो जंग मैं ।
करनधार बिन नाव फिरै ज्यों गंग मैं ॥
जुधामन्यु तब आय उठाय लगाम कों ।
पृथु–बल पृथु के संग सज्यो संग्राम कों ॥ ४७ ॥
तब पृथु धीरधुरीन कही यह बात कों ।
हौं पृथु पृथु–सम बली करौं तुव घात कों ॥
जुधामन्यु हँसि कह्यो पृथी–पितु पृथु अहौ ।
तौ महिपन के ससुर कहा प्रभुता कहौ ॥ ४८ ॥
इमि सुनि पृथु भो कहत सरासन लेत हौं ।
जुधामन्यु तुव मन्यु दूरि करि देत हौं ॥

इमि कहि ते दोउ बीर लरे अति जोर सों ।
संगर-थरभर दीन चाप के सोर सों ॥ ४९ ॥

[बरवै]

बिप्रथु सँग कौसल नृप धीर-निधान ।
करि रन अगानित बिधि के बरखे बान ॥ ५० ॥
बिप्रथु कहत तुम पहुँचे पश्चिम द्वार ।
पश्चिम गति निज जानहु नर-सरदार ॥ ५१ ॥
सुनिकै कहत बृहतबल नाम नरेस ।
पश्चिम द्वार कढ़े तुम अब न प्रवेस ॥ ५२ ॥
दोउ इमि भाषि परसपर परम प्रचंड ।
जल धारा सम बरसे बिसिख अखंड ॥ ५३ ॥

[मौक्तिकदाम छंद]

भिरे तिमि आहुक सल्य नरेस । कियो सर को बर सेत बिसेस ॥
तहाँ जदु बृद्धहि देखि समीप । भए इमि बोलत मद्र महीप ॥५४॥
अहैं हम सल्य धरा सरनाम । करैं रन मैं पर सल्य मुदाम ॥
कहै सुनि आहुक युक्ति बनाय । सुनौ मम बात कहौं सति भाय ॥५५
रहे तुम सल्य कहावत मात्र । अबै सह सल्य करौं सब गात्र ॥
बखानि दोऊ भट या बिधि बात । लगे करिबे बर आयुध घात ॥५६॥

---

४९ मन्यु=क्रोध ।

५५ सरनाम=(फा०) प्रसिद्ध । मुदाम=(फा०) सर्वदा ।

[हरिपद छंद]

छत्रापेच्छ सुवन सुफलक को बृहतछत्र नृप संग ।
लरत भयो संधानि सरासन रन को बढ़्यो उमंग ॥
ता छन नृप नै जादव को धनु धरनि गिरायो खंडि ।
तब दूजो धनु धरि सर बरख्यो पर-रथ दीनो मंडि ॥५७॥
अर्द्ध चन्द्र तजिकै पुनि काट्यो वृहतछत्र को छत्र ।
सो लखि कोपि टँकारि चाप निज बोलो नरपति तत्र ॥
तू तो छत्रापेच्छ कहावत छत्र अपेच्छा तोहि ।
मैं तो वृहत छत्र जग जाहिर कहा लरत लखु मोहि ॥५८॥
छत्रापेच्छ कहै नहिं जान्यो नाम अर्थ है जोय ।
छत्र सहित जा नाम होय रन हमहिं अपेच्छित सोय ॥
बहुरि कहा निज करत बड़ाई लखु तौ आपुन हाल ।
प्रथम अखर उड़ि गयो नाम को ताको अहै न ख्याल ॥५९॥

[सोरठा]

इमि सुनि जादव—बैन नरपति राते नैन करि ।
बरख्यो सर बलऐन तिमि तानै पर दिसि कियो ॥६०॥

[पज्झली छंद]

नृप अंग सुकरमा अतिहि क्रुद्ध । भिरि कै कीनो भरि जोर जुद्ध ॥
तहँ जादव बहु सर तजि सुढंग । भरि दियो अंग को सबहि अंग॥६१॥
पुनि हँसि बोल्यो नरपाल संग । मागध अंगी तुम अहहु अंग ॥
अब आज आजि महँ मोहि पाय । यह भाव आसु तजि देहु राय॥६२

---

६२ आजि=लड़ाई ।

प्राचीन अंग तुम भए भूप । नव अंग होहु सुंदर सरूप ॥
सुनि कोपि नृपति करि लाल नैन । इमि बोलो सुफलक-सुतहिं बैन ६३
मम नाम अंग नृप जंग कहत्त। सब अंगन के पति अहैं सत्त ॥
तुव नाम सुकरमा कहहिं लोग । सुकरम प्रभाव नव अंग जोग ६४
सो अब हम तुम सौं मिले जुद्ध। नव अग लहहु है समर सुद्ध ॥
इमि बरनि उभय भट बलनिधान । रन करत भए अगनित बिधान ६५

[जयकरी छंद]

बंग-महीपति मृदुर सुजान । लरत भए बिबि दुरद समान ॥
ता छन जादव सर के जोर । पर भट बहु पठए जम ओर ॥६६॥
निज दल नास देखि नरपाल । कहत मृदुर सों बचन बिसाल ॥
मम दल-तन महँ तू गत त्रास । राज रोग सम करत बिलास ॥६७
सो हम बंग अहैं जग ख्यात । आसु करत हौं तेरो घात ॥
इमि कहि तजि सायक-समुदाय । दियो मृदुर को स्यंदन छाय ॥६८

[नरेस छंद]

मृदुजीत कलिंग महाबली । सर पूरि दियो रन की थली ॥
दोउ बीर कमान बजावहीं । तड़िता अरु मेघ लजावहीं ॥६९॥
तब भूप महा रिसि सों छयो । इमि जादव सों कहतो भयो ॥
मृदुजीत कहावत तू अहै । किमि जीति कठोरन सों लहैं ॥७०॥
भुजदंड नहीं मम जोहतो । जमदंडहु जा लखि मोहतो ॥
कह जादव सो बलधाम को । नाहिं अर्थ करै निज नाम को ॥७१॥
प्रथमाच्छर जो बिलगात है । असलील महान कहात है ॥
सुनि सो नृप नैन तरेरिकै । पर पैं सर दीन बखेरिकै ॥७२॥

[विष्णुपद छंद]

भट आसंग किंपुरुस दोऊ जंग भये करते ।
दुसह दुजीह सरिस बहु सायक दिसन माहिं भरते ॥
जादव कहत किंपुरुस तू है लरन जोग नाहीं ।
का निज पुरुसारथ दिखरावत पुरुस सिंह माहीं ॥ ७३ ॥
कहत किंपुरुस सुफलक-सुत सों तू आसंग अहै ।
चार ओर सों पाथर जड़तर मो कहँ कहा कहै ॥
कहा पुरुष रन मैं मम सनमुख और होय कोऊ ।
यह मम नाम अर्थ है साँचो हिए समुझ सोऊ ॥ ७४ ॥
कह आसंग अहैं हम पाथर साँच बात बरनी ।
समर सत्रु-मुख कूँचत छन मैं कठिन करैं करनी ॥
इमि कहि उभय महा बलसाली महाकोप पूरे ।
करन लगे आयुध की बरसा तजे अस्त्र रूरे ॥ ७५ ॥

[विशेखिका छंद]

संगर मैं गिरि औ द्रुम कोपित जुद्ध करैं ।
चारहु ओर बिलास सिलीमुख जाल भरैं ॥
ता छन देखि महीपति जादव गर्जि महा ।
जानहि जान मिलाइ तहाँ यह बैन कहा ॥ ७६ ॥
तू द्रुम नाम कहावत सो अब साँच बनै ।
आजु करौं द्रुम के सम छिन्नित मूल रनै ॥

---

७४ आसंग—[फा० संग] पत्थर ।

यों सुनि कोपि भयो नृप बोलत हाथ मले।
तू गिरि है गिरिहै सति संगर बान चले॥
जादव तेखि तबै बरन्यो इमि भूप बरै।
तू मतिहीन बृथा समझे बिन बात करै॥
मैं गिरि तू द्रुम क्यों समता लखु तौ मन से।
होत अहैं द्रुम कोटि कई गिरि पैं तृन से॥ ७८॥
भूप कहै द्रुम जद्यपि कोटिन होत अहैं।
तद्यपि ते गिरि के सिर पैं सब काल रहैं॥
सो हम तो सिर बैठन लायक श्रेष्ठ सदा।
यों कहि ते दोउ गाजि भिरे धरि दीह गदा॥ ७९॥

[चामर छंद]

सारमेय चेकितान जुद्ध ठानते भये।
बान ब्याल-बृंद से दिसान सान सों छये॥
काल से कराल तौन काल ते प्रकासते।
बीर बाजि ब्याल बृंद बेग सों बिनासते॥ ८०॥
चेकितान तेखि तत्र सत्रु पास यों कही।
सारमेय नाम बूझि बिप्र ने धरयो सही॥
भैरवी सवार होत नाथ संग नित्तहीं।
साँच होय नाम मोर बान पाय इत्तहीं॥ ८१॥

---

८१ सारमेय—कुत्ता।

जवाब दीन भैम बीर सारमेय हौं सही ।
तो समान लोमरी सिकार कौं करौं मही ॥
यों बखानि चाप तानि बान बेग सों हनो ।
चेकितान त्यों भिरयो महान कोप सों सनो ॥ ८२ ॥

[मल्लिका छंद]

त्यों करूस औ अक्रूर । जुद्ध कीन कोप पूर ॥
बान त्यागि बेगवंत । भूमि मैं भरयौ समंत ॥ ८३ ॥
स्याम भेख देखि तासु । भैम भट्ट कीन हासु ॥
बैन यों कह्यो नगीच । भाँड़ तू महीप बीच ॥ ८४ ॥
भेख कों भलो सजत्त । नट्ट हू लखे लजत्त ॥
सो सुने हिये रिसाय । बोलियो करूस राय ॥ ८५ ॥

[छप्पय]

कंस संग रहि प्रथम भयो बैरी जदुकुल को ।
उग्रसेन किय कैद मंत्र दीनो यह खुल को ॥
छल करि लायो सिसुन जतन मरिबे को ठान्यो ।
बहुरि कंस के मरत मिल्यो तिन सों अघ सान्यो ॥
अक्रूर कहावत क्रूर मति बात करत बनि साधु अति ।
किन नाम कीन तुव दानपति है नितही नादान-पति ॥८६॥

[सोरठा]

पौंड्रक की सुनि बात रुसित गात सुफलक सुवन ।
करी बान बरसात तिमि तित कंतितपति लरयो ॥ ८७ ॥

[चंचला छंद]

गंधमाद आहुती बिसाल जुद्ध भे करत्त ।
चार ओर शस्त्र के समूह छाँड़ि कै भरत्त ॥
पत्ति बाजि ब्याल बृंद लाख हूँ भए मरत्त ।
खंड खंड होय आसु जुद्धभूमि में परत्त ॥ ८८ ॥
ता समै पुकारि भैम बीर को महीप तौन ।
बैन बोलतो भयो गँभीर मेघ तुल्य जौन ॥
तू अली समान गंधमाद नाम ख्यात भूमि ।
जुद्ध-स्वाद का गुनै पराग चाखु बाग घूमि ॥ ८९ ॥
यों जबै हँसी करी महीप सत्रु के समीप ।
तेखि के जवाब दीन आसु इंदु-बंस-दीप ॥
मैं अली बली सदा पराग रक्त मद्द थान ।
लेत हौं अरी-कली सवाद कों भली बिधान ॥ ९० ॥
तू मिल्यो प्रसून कोमलांग आजु धन्य भाग ।
चाखिहैं भले प्रसन्न संग प्रान औ पराग ॥
यों बखानि ते दोऊ प्रचंड चाप कों बजाय ।
जुद्ध लागिबे करै हिये महा अमर्ष छाय ॥ ९१ ॥

[चौपैया छंद]

कैसिक अरि मरदन हरि-सम नरदन समर भली बिधि ठानो ।
बरखैं सर धारा भो अँधियारा घन बरसत जल मानो ॥
अति बलकैं दोऊ घाट न कोऊ भट रस प्रगट लखानो ।
धरु मारु पुकारैं नाम उचारैं धरे धीरपन-बानो ॥९२॥

तब जादव बढ़िकै इत लखु पढ़िकै अरि सों बात बखानी ।
हम हैं अरिमदन रन अरि मरदन करत तोर असु-हानी ॥
सुनि कैसिक नरपति बोल्यो बर-मति अरथ और इत चहियै ।
अरि सौंह मरद नहिं है जो रन माहिं तेहिं अरिमरदन कहियै ॥९३॥
तब जादव जंगी मति रन रंगी ऐसे बचन बखानो ।
अरिमरदन कोऊ है मोहि सोऊ साँच अर्थ पहिचानो ॥
इमि कहि अरिमरदन तहँ अरि मरदन जमपुर पठवन लागो ।
तिमि नृप तजि तीरन दुसमन बीरन बधन लगो रिसि पागो ॥९४॥

[हरिगीती छंद]

तहँ कासमीरी भूमिपति गोनर्द धनु टंकारिकै ।
भट धर्मवृद्धहि छाय दीनो मारु मारु पुकारिकै ॥
सुफलक-सुवन धनु धारि निज अहि सरिस बान प्रहारिकै ।
सब काटिकै दुसमन-बिसिख महि मध्य दीने डारिकै ॥९५॥
गोनर्द तब बोलत भयो तू ज्वान प्रगट लखात है ।
क्यों धर्मवृद्ध कहात है आचरज यह अधिकात है ॥
पै एक बात बिचार करि संदेह मेरो जात है ।
रन धरम बृद्धन को धरै अति सिथिल तेरो गात है ॥९६॥
जदुबीर तब बोलत भयो नृप साँच तोहि बातै कहैं ।
हम धर्मवृद्ध कहात हैं पै करम-वृद्ध नहीं अहैं ॥
अरु धरम बृख को नाम है सो बृद्ध बहु दिन को भयो ।
गोनरद तू रद-रहित बूढ़ो पतिहि क्यौं चाहै नयो ॥७७॥

इमि बचन सुनि सुफलक–सुवन के कासमीरी कोपिकै ।
बहु बरखि आयुध बारिधर सम दियो पर-रथ लोपिकै ॥
तिमि धर्मबृद्ध बजाय धनु सर त्याग कीने चोपिकै ।
गोनर्द सस्त्र उड़ाय कै गरज्यो बिजय पन रोपिकै ॥९८॥

(लक्ष्मीधर छंद)

सुंभ सत्रुघ्न दोऊ भरे कोप सों ।
जुद्ध भे ठानते जीति की चोप से ॥
त्यागिकै बान को भूमि पूरै लगे ।
ता समै देखिकै और जोधा भगे ॥ ९९ ॥
बात सत्रुघ्न नै सुंभ सों यों कही ।
प्रान तो लेउँ सत्रुघ्न हौं तो सही ॥
सुंभ बोल्यो तबै भैमसों तेखिकै ।
लाल नैना धरे बक्रता देखिकै ॥ १०० ॥
नाम तेरो अहै व्यर्थ संसार मैं ।
राखि दीनो पिता मात नै प्यार मैं ॥
आजु सत्रुघ्नता खोय संग्राम मैं ।
जात तू सूर-संतान के धाम मैं ॥ १०१ ॥
देव सों जीति ज्यों सुंभ दानौ लही ।
मारिकै तोहिं त्यों पायहौं हौं सही ॥

---

१०१ सूर संतान=यम ।

बैन सो सौन कै बंधु अक्रूर को ।
बोलतो यों भयो बैन ज्यों सूर को ॥ १०२ ॥
सुंभ तू है घरी द्वैक लौं जूझिलै ।
आदि शक्ती अहौं मैं हीये बूझिलै ॥
भाखिकै यों दोऊ चाप संधानिकै ।
जुद्ध आरंभ कीनो पनै ठानिकै ॥ १०३ ॥

(मनोरमा छंद)

प्रतिबाहु अनामय जुद्ध रच्यो तहँ ।
रन जीतन की अति चाह हिये महँ ॥
बरछी धरिकै बर भारमई वित ।
प्रतिबाहु तजी अरि के प्रति कोपित ॥ १०४ ॥
सर मारि अनामय काट दई द्रुत ।
महि आय परी कटि बिज्जु प्रभाजुत ॥
तब पर्वत भूप कहै जदुबीरहि ।
भट तौ तुम धारहु जौ मम तीरहि ॥ १०५ ॥
इमि भाखि हने सर सात फनी सम ।
तन लागत भो प्रतिबाहु भटै भ्रम ॥
पुनि चेति रिसाय सुधारि सरासन ।
निज सायक त्यागि किये अरि-नासन ॥ १०६ ॥
धसि अंग अनामय रक्त पियो तिन ।
ध्वज लागि रह्यो गत चेत कोउ छिन ॥

पुनि चेति कहै मम नाम अनामय ।
रन आमय तू तोहि आज करौं लय ॥ १०७ ॥

[दोहा]

तब बोल्यो प्रतिबाहु भट बचन सुनहु नरराय ।
हरन करौं पिछलो हरफ तू आपहि उड़ि जाय ॥१०८॥
इमि कहि कहि दोउ अमर-बल समर सुरथ आसीन ।
लरत भए बहु भाँति सों परम पराक्रम पीन ॥१०९॥
इहि बिधि पच्छिम द्वार पै होत भयो संग्राम ।
पृथक पृथक सब कहि सके को कवि अस मतिधाम ॥११०॥

---

१०७ आमय=रोग, घास ।

११. सर्ग

[सोरठा]

मागध जादव बीर मथुरा उत्तर द्वार पर।
लरन लगे रनधीर एकहि एक पुकारिकै ॥ १ ॥

[जैकरी]

हरि-मातामह देवक बीर। भिरे भीसमक सों रनधीर।
देववान रुकमी के संग। सज्यो जंग करि करि भट ढंग ॥२॥
नृप बिराट सों गहि अहमेव। भिरतो भयो सुभट उपदेव।
बिंद अवंती को सरदार। करी सुदेव बीर सँग मार ॥३॥
नृप अनुबिंद लिए धनु हाथ। भिरयो देवबरधन के साथ॥
दंतबक्र अति बिक्रमवंत। कृतबरमा सों भिरयो तुरंत ॥४॥
सतधन्वा सतधन्वहि टेरि। रन महँ आड्यौ नैन तरेरि॥
छागलि भूपति तेजनिधान। तासों भिरत भयो इखुमान ॥५॥
नृपति कुनिंद बिजयपन ठानि। भिरयो सत्यजित सों धनु तानि॥
पुरुजित अरु पुरुमित्र महीप। राज्यो रन रथ जोरि समीप ॥६॥
चित्रसैन नृप ह्वै कै क्रुद्ध। चित्रकेतु सों ठान्यो जुद्ध॥
बभ्रु नाम जादव-परधान। मालव नृप सों भिरयो सुजान ॥७॥
नृप सौवीर सुबीरहिं बोल। लाग्यो लरन बीर रस खोल॥
सूरजाच्छ उर पूरि गरूर। भिरयो सूर सों टेरि हजूर ॥८॥

---

८ हजूर=(अ०) सामने।

द्रुपद महीपति अति बलधाम। किय बसुदेव संग संग्राम ॥
सिंधु महीप जयद्रथ जौन। देवभाग सों अरुझ्यो तौन ॥९॥
बीर विदूरथ रथ आसीन। देवस्रवा सँग संगर कीन ॥
पौरव नृपति महाबलसीम। आनक सों अभिरो रनभीम ॥१०॥
सोमक स्यामकरन रसरागी। भिरत भए बहु आयुध त्यागी ॥
बेनुदारि नृप चाप बजाय। भिर्‍यो समीक संग रिसि छाय ॥११॥
सृंजय नामक सूर-कुमार। भिर्‍यो पांड्य नृप सँग ता बार ॥
नृपति पंचनद धीरधुरीन। कंक बीर सों संगर कीन ॥१२॥
भूप कुसांब सहित निज पच्छ। बृक सों लरत भयो जय लच्छ ॥
इमि दोउ दिसि के सुभट प्रचंड। जुद्ध सज्यो उर घनो घमंड ॥१३॥

[दोहा]

दुंद जुद्ध माच्यो तहाँ सोभा बढ़ी अपार।
इक इक भट दुहुँ ओर के करन लगे तकरार ॥ १४ ॥

[विशेखिका छंद]

देवक भीस्मक संगर के मधि साजि अनी।
चारहु ओर बिसाल रची सर-जाल घनी ॥
फेरत स्यंदन मंडल के सम तौन थली।
टेरत नाम बली अरुझे दोउ भाँति भली ॥ १५ ॥
देवक कुंडिन-भूप हिये तकि साँग हनी।
धाय चली गति लै अति ज्यों परदार फनी ॥
सो लखि सायक आठ तजे द्रुत तेज भरे।
है नव खंड परी बसुधा जब दूरि करे ॥ १६ ॥

भीसमक चक्र उठाय हन्यो ललकारि परै ।
कंचन को परकासि चल्यो पर-सीस हरै ॥
आयस भल्ल तज्यो जदुनंदन बेग भरो ।
मध्य रथांग लग्यो तेहि लै पुनि भूमि परो ॥ १७ ॥
भानु लखे सुरभानु मनो बढ़ि जाय भिरो ।
लै निज संग पतंगहि संगर माहिं गिरो ॥
ता छन देवक को लखि कुंडिन भूप बली ।
बैन कह्यो इमि चैन धरे मनु जुद्ध थली ॥ १८ ॥
बालन सों मरवाइ भतीजहिं मोदमयो ।
भूपन सों लरिबे हित तू अब सज्ज भयो ॥
नातिन के बल चाहत भूतल राज कियो ।
ना तिनके बल को हम मानत नेकु हियो ॥ १९ ॥
सो सुनि देवक उत्तर भूपहि देत भयो ।
का बढ़ि भीष्मक बोलत बैन गरूर-मयो ॥
जो मम नातिहिं नाम धरै नहिं तौन फबै ।
है वह तोर दमाद प्रमादहिं त्यागु अबै ॥ २० ॥
दर्भ धरे तनया कर साथ बिदर्भपती ।
अर्पन तू करिहै जबहीं तब होय रती ॥
यों सुनि भीष्मक कोपि तजे सर बेग धरे ।
त्यों तिनके सँग देवक देव-प्रभाव लरे ॥ २१ ॥

---

१७ रथांग=चक्र।

१८ सुरभानु=राहु ।

[नाराच छंद]

टँकारि चाप देववान बान रुक्म पै तजे ।
जिन्हें लखे झलाझली हलाहली हिये लजे ॥
निहारि सो विदर्भ बीर भूरि कोप पूरिकै ।
प्रहारि आपुने नराच राहु दीन चूरिकै ॥ २२ ॥
बहोरि साठ बान बेग सों तजे प्रचारिकै ।
तुरंत देववान काटि दीन भूमि डारिकै ॥
रच्यो इही बिधान तुल्य जुद्ध ते दोऊ बली ।
बधे दोऊ दिसा तुरंग नाग पत्ति ता थली ॥ २३ ॥
बिदर्भ बीर भैम धीर कों पुकारि यों कही ।
कढ़्यो दुआर उत्तरै सोई गती मिलै सही ॥
जवाब दीन देववान नैन कों तरेरिकै ।
बृथा बकै लबार बाल काल लाव घेरिकै ॥ २४ ॥
तुरंत मान उत्तरै निहारि द्वार उत्तरै ।
न देत तोहि उत्तरै बिचारि बाल जी जरै ॥
बखानि या बिधान ते उभै अभै पराक्रमी ।
तजे नराच बेग साधि जुद्ध की भरी जमी ॥ २५ ॥

[तोटक]

उपदेव-बिराट भिरे बल सों । पुरई धुनि चाप चलाचल सों ।
रथ फेरत दच्छिन सव्य दिसा । सर छादन ते दिन कीन निसा॥२६॥
नृप जादव कों सत बान हने । अति तीछन आयस सार बने ॥
उपदेव तिते सर त्याग किये । पर के द्रुत काटि गिराय दिये ॥२७॥

निज सायक व्यर्थ निहारि तबै । नृप बोलेउ बाँचत तू न अबै ॥
इमि भाखि त्रिसूल उठाइ बली । उर ताकि तज्यो द्रुत भाँतिभली॥२८॥
लखि सो उपदेव गह्यो बढ़िकै । पुनि त्यागेउ 'तू न बचै' पढ़िकै॥
तिहि देखि बिराट हटाइ रथै । करि दीन बृथा सँगराम-पथै॥२९॥
कोउ पै कोउ मारइ मूठ जथा । उलटै वह भो व्यवहार तथा ॥
उपदेव तबै गरजो रन में । नृप सों इमि बोलेउ वा छन में॥३०॥
तुम सुंदर नाम बिराट लहौ । किन पच्छिम के सरदार अहौ ॥
सुनि उत्तर दीन महीप तहाँ । उलटो समुझै तुव बुद्धि कहाँ॥३१॥
सुर सत्तम या जग हेतु जोई । मम नाम बिराट कहात सोई ॥
उपदेव कहा हम सों समता । अति नीच तऊ न तजै हमता॥३२॥
सुनि यों जदुनंदन कोपि हिया । बहु बानन को बरसात किया॥
तिमि भूप बिराट सिलीमुख सों । पर छाय दियो जय की रुख सों३३॥

[मोदक छंद]

बिंद सुदेव महाबलसागर । संगर ठाट ठट्यो गुन-आगर ॥
दोउन के सर की बरखा बर । छाय गई भुव ब्योम सबै थर॥३४॥
सायक आठ सुदेव तहाँ गनि । बिंदहि मारत भो 'न बचै' भनि॥
अष्ट कुली अहि से सर ता छन । कीन प्रवेश पृथीपति के तन॥३५॥
भूप तबै तजि कै सब चेतहि । आसु गिरो रथ सों रन-खेतहि॥
सो लखि सो तजि बान करोरन । प्रान बिहीन किए अरि-घोरन॥३६॥

---

३१ विराट=(सं० वि=पक्षी) पक्षियों का राजा, गरुड़ ।

३५ अष्टकुली=सर्पों की सब से भयंकर आठ जातियों में उत्पन्न, पुराणानुसार सर्पों के आठ कुल भे उत्पन्न ।

चेति महीप खरो रहि भूपर। बान तजे बहु जादव ऊपर ॥
तौ लगि आय गयो दुसरो रथ। तापर बैठि भिरो बढ़ि कै पथ॥ ३७॥
सो लखि जादव बैन कह्यो इमि। ह्वै अरथी तुम होत रथी किमि॥
बिंद कहै अरथी मोहिं जानहु। आपुहि आसु रथी-गत मानहु॥ ३८॥
आज महा धनु को धुनि कै रन। तोहि बधौं यह मोर अहै पन॥
यों कहि ते दोउ संगर-पंडित। कीन परस्पर सस्त्रन मंडित॥ ३९॥

[रोला छंद]

भिर्‍यो नृप अनुबिंद जादव देवबरधन संग।
जग में दुहुँ ओर आयुध चले एकहि ढंग॥
बिंदु के अनुबिंद बरसत जथा सावन अब्द।
तथा सर अनुबिंद बरसत करत तिमि धनु शब्द॥ ४०॥
लहर बरधन करति सरिता जथा लहि बरसात।
देवबरधन तथा बरधन करत बल बिख्यात॥
ता समै दुहुँ ओर के भट निरखि सो संग्राम।
चित्र से रहिगए ठाढ़े गुनत अद्भुत काम॥ ४१॥
बिंद अनुज प्रहारि सायक सत्रु-धुज किय खंड।
तबै भल्ल प्रहारि जादव खंडियो कोदंड॥
आन धनु कहँ धारि कर अनुबिंद त्यागे बान।
सहन करि तेहि भेम सोऊ दुधा कीन कमान॥ ४२॥
पुनि अपर धनु धरि भूप तब तजे सर समुदाय।

---

४० अब्द=जल।
४२ दुधा=(सं० द्विधा) दो टुकड़े।

तिनहिं मग महँ काटि जादव कहत इमि रिसि छाय॥
नाम तो अनुबिंदु काने धर्‍यो जानि महत्त्व।
बिंद सब महँ नीच सोउ अनु जासु है यह तत्त्व॥ ४३ ॥
देवबरधन हौं कहावत आदि सब की जानु।
कहाँ मो सँग लरत पहिले नाम तो पहिचानु॥
कहत सुनि अनुबिंद मूरख तू न जानत अर्थ।
अहैं हम अति अधिक तोसों सबहिं भाँति समर्थ॥ ४४ ॥
प्रगट जग अनुबिंद है गोबिंद अरु अरबिंद।
एक सब जग आदि दूजो द्रुहिन आदि अनिंद॥
देवबरधन कहिय कस्यप दोउ तिनसों श्रेष्ठ।
कहा बोलत बाल तू नहिं गुनत नाम जथेष्ट॥ ४५ ॥
बचन सुनि देवक-सुवन करि उभै लोचन लाल।
तजे सर उज्जैनपति पर चले बढ़ि जिमि ब्याल॥
तिमि नृपति अनुबिंद धनु टंकार करि बिकराल।
भयो जादव सैन ऊपर रचत सायक-जाल॥ ४६ ॥

[जैकरी छंद]

दतबक्र कृतबरमा बीर। तजै परस्पर तीछन तीर॥
भट करूम अति दीरघ काय। चलो दनुज सम गदा उठाय॥४७॥
तासु रूप लखि जादव बृंद। दूरि दुरे करि रन आनंद।
कृतबरमा निज सर के जोर। रोक्यो पर रथ करि बर सोर॥४८॥

---

४३ बिंद=शूद्रों में एक नीच जाति।

४५ द्रुहिन (सं० द्रुहिण) ब्रह्मा।

तबहिं कूदि महि पर सह गर्व । हते गदा सों अरि के अर्व ॥
तब जादव कर असि लै डाँटि । कर सों गदा गिराई काटि ॥४९॥
पुनि धनु धरि सर छादन कीन । ठाढ़ रह्यो करूस तन पीन ॥
सर गत सो इमि लसो बिलंद । जिमि गज आयस पिंजर बंद ॥५०॥
दंतबक्र तब करि रव घोर । सरन मरदि निकरो सर जोर ॥
बैठि सुरथ चापहि संधानि । बरस्यो सायक जय अनुमानि ॥५१॥
कृतबरमा तिमि चढ़ि रथ और । भिरत भयो जादव-सिरमौर ॥
तहँ करूस लाघवता ठाटि । अरि को कवच गिरायो काटि ॥५२॥
पुनि इमि गरजि कह्यो गुनि मर्म । तू कृतवर्म भयो गत वर्म ॥
तब सकोप जादव बलवान । कहत बचन टंकारि कमान ॥५३॥
कवच कटन को दुख नाहिं मोहिं । अब गत दंत करत मैं तोहि ॥
रद के संग बक्रता जाय । दंतबक्र यह नाम उड़ाय ॥५४॥
बृद्ध सर्म को तू संतान । बृद्ध होय रहु त्यागि गुमान ॥
क्रांत नाम जो चहै ससाक । मम सर क्रांत गमन करु नाक ॥५५॥
इमि कहि कृतवरमा तिहि काल । तजी सत्रु पै सायक-माल ॥
दंतबक्र तेहि काटि गिराय । निज सरमाल सत्रु पहिराय ॥५६॥
लरत याहि बिधि दूनहु बीर । हनत सत्रु-सेनहि पर तीर ॥
मागध—जादव—सैन बिहाल । देखत जुद्ध महाबिकराल ॥५७॥

[पद्धटिका छंद]

सतधन्वा लै धनु तहँ प्रचंड । निज नाम बीर सों भिरयो चंड ॥
बरसाय धार सर की कराल । तब सत्रु फँसायो तीर-जाल ॥५८॥

प्रतिद्वंदी भट झट बीर बाह । तब लै त्रिसूल सब दिसन चाह ॥
पुनि गरब पूरि सर जाल तोर। त्याग्यो चिकारि करि गेर घोर ॥५९॥
सतधन्वा सायक मारि मारि । तिरसूल गिरायो तहाँ झारि ॥
तिरसूल गिरे तब बीर धीर। चढ़ि रथहिं लियो तहँ धनुष तीर॥६०॥
अरु गरजि घोर तब कहन लाग। मम नाम तुरत तू देहि त्याग ॥
धनुही यक तोसों नहिं चलाय। सतधन्वा कहत न तू लजाय॥६१॥
तब कह्यो बीर जादव सुनाम । तोहिं अबहिं देहु गतधन्व नाम ॥
मम नाम अकारहिं सहित भाखु।यहि नामधारि नहिं रखौं साखु॥६२॥
इमि कथत सुनत ते लरहिं बीर। नभ पूरि देहिं तहँ छाँड़ि तीर॥
लै सक्ति सूल तीखन कृपान । दोउ भिरहिं परसपर देइ आन॥६३॥

[तारक छंद]

इषुमान महाबलवान भिर्‌यो तहँ। मन छागलि भूपहिं को जीतन महँ॥
रथ छाँड़ि तबै भट लै करवालैं। कर में अरु द्वै सुबिसाल सुढालैं ॥६४
बिच संगर बीर उभै पन रोप्यौ। बिजुली चमकी जबहीं तिन कोप्यो॥
लगि कै करवाल झनाझन बाजैं। तड़कैं, सड़कैं जब दूनहुँ गाजैं ६५॥
यकसाथ खटाखट बैठि सो टूटीं। भिरि ढाल सों ढाल फटाफट फूटीं॥
चढ़ि कै रथ दोउ सुबीर अमर्षे। धनु सायक लै तहँ चोपि करष्षे ६६॥
इषुमान कह्यो सुनु 'छागलि राजन! नहिं चाहिय केसरि सों रनगाजन॥
तु अहै भख ताकर' सो सुनिकै वह। तब कोपि कह्यो इषुमान 'सुनो यह॥
रनबीर अहैं मुखबीर नहीं हम। जब जंग जुरे तब जुद्ध करो जम'॥
इमि बीर उभै कहिकै रन गाजे। सर भल्लक आयुध छाँड़त राजे ६६॥

[चामर छंद]

कुनिंद भूप दौरि बीर सत्यजीत सों भिरयो ।
मारि मारि तीर तोपि छोपि रत्थ कों लियो ।।
सत्यजीत तीर-तोम तोरि तारि डारिकै ।
तखिकै कह्यो नराच घोर ताहि मारिकै ।। ६९ ।।
कुनिंद भूप ! कुंद बुद्धि औ कुनिंद्य तू अहै ।
तोहिं दुंद जुद्ध में न मोहिं सों भिरयो चहै ।।
सत्यजीत यों कह्यो तबै कुनिंद कोपि कै ।
मारि सायकानि काटि तीर चाप चोपि कै ।। ७० ।।
बीर धीर यों कह्यो कि बाल जानि नहिं लरौं ।
सत्यजीत नाम को असत्यजीत मैं करौं ।।
तोहि मैं रखौं न आजु जौ न भागि जाइहै ।
यों कठोर बोलि बीर अस्त्र शस्त्र कों गहै ।। ७१ ।।

[नाराच छंद]

तब चल्यो पुरुजित् बीर । करि धनु टँकोर गँभीर ।।
मग रोकि तब पुरुमित्र । कह जात कहाँ अमित्र ! ।।७२।।
पुरु जितन को हम तोहिं । पठवौं प्रचारै मोहिं ।।
तब सत्य कीजो नाम । नहिं छाँड़ु तैं यह नाम ।।७३।।
सुनि कह्यो तब पुरुजीत । पुरु लोक को तू मीत ।।
तोहिं भेजि तहँ तब आय । करिहौं विजय रन चाय ।।७४।।

---

(१) पुरुजितन=स्वर्ग विजय करना अर्थात् मत्युलोक से स्वर्ग को विदा करना, मारना ।

यों कहत तबहिं कराल । छाँड़े बिसिख तत्काल ॥
चले फुंकरत जनु व्याल । तहँ पच्छधर मनु काल ॥७५॥
तब धार्तराष्ट्रहु कोपि । धनु बान लीन्हों चोपि ॥
खरतर सरहि संधानि । मोर करन लौं तानि ॥७६॥
पच्छीस सम ते तीर । रिपु सरहिं डारयो चीर ॥
लै सक्ति सूल प्रचंड । तहँ भिरे दूनहु चंड ॥७७॥

[हरिगीति छंद]

तहँ चित्रसेनहु धारि धनु धायो बिसिख संधानिकै ।
उर माँझ सायक द्वै हयो प्रति-वीर कों ललकारिकै ॥
तब चित्रध्वजहू कोपि कै सरधार सों रथ तोपिकै ।
घनघोर रव करि बिज्जु सी भल्लक चलायो चोपिकै ॥७७॥
उर लगत भल्लक के तबै छन एक चित्रित ह्वै गयो ।
संभारिकै टंकारि धनु सर जाल काटि प्रगट भयो ॥
तब कोपि मारयो कठिन सर कटि केतु पृथ्वी पै गिरयो ॥
करि अट्टहास कह्यो तबै वह केतु भूमि अहै परयो ॥७८॥
अब चित्र केतुहिं काटिबो मोहिं बीर को न सुहात है ।
सुनि कह्यो हँसिकै देवसुत आचरज कहा लखात है ? ॥
कहु सूर-सुत कहँ सत्य चित्रहिं भेद कस प्रगटात है ।"
इमि कहत लरत सुबीर दोऊ, जुद्ध रस अधिकात है ॥७९॥

---

(७६) धार्तराष्ट्र=पुरुमित्र धृतराष्ट्र का पुत्र था ।

(७८) सत्य केतु=प्रत्यक्ष सच्ची ध्वजा । सूर-सुत=अंधे धृतराष्ट्र का पुत्र चित्रसेन ।

[दोधक छंद]

मालवराज चल्यो जब जोधा । चापि टँकारत धन्वक क्रोधा ॥
सन्मुख जादव बभ्रु सुवीरा । मार्ग निरोधि अड़्यो तहँ धीरा॥८०॥
देखत द्वंदिहिं सो तब मार्‍यो । क्रोध-हुतासन आहुति चार्‍यो ॥
सायक छाय दियो अरु डाँट्यो। ।तापि रथै ध्वज को तहँ काट्यो ॥८१॥
देखत साहस बभ्रु कह्यो यों । मा लव है पुनि जोर करै क्यों ! ।
सो सुनि मालवराज प्रचार्‍यो । लै सर तीछन भ्रू पर मार्‍यो ॥ ८२ ॥
तेखि कह्यौ तब बभ्रु अहै तू । सम्मुख सिंह कहा करिहै तू ! ।
या बिधि सों कहि कै दुहुँ बीरा । जुद्ध लगे करिबे धरि धीरा ॥ ८३ ॥

[पज्झली छंद]

सौवीर सुवीरहिं तबहिं हेरि । रन माहँ प्रचार्‍यो ताहि टेरि ॥
टंकारि धनुष सायकन मारि । दोउ बीर भिरे मानहिं न हारि ॥८४॥
सौवीर कह्यो व्है अतिहि क्रुद्ध । तव नामहि है अतिही अशुद्ध ॥
कीन्हो सकार जहँ चहि ककार । अब मारि करौ भवसमुद पार॥८५॥
सुनिकै सुवीर हँसिकै कहत्त । रखि झूठ नाम जग कों ठगत्त ॥
व्है एक कहत सौवीर आप । लहिहै कुकर्म को भोग, पाप ! ॥८६॥
सो अब हम तुमकों बीच जुद्ध । हति भेजि नरक कों करौं सुद्ध ॥
इमि भाषि बीर दोउ बलनिधान । तब करन लगे रन बहु बिधान॥८७॥

[रोला छंद]

सूरजाच्छ प्रचंड भूपति किए राते नैन ।
बढ़्यो टेरत सूर को रिसि धरे बोलत बैन ॥

---

८२ मालव=(सं० मा+लव) नहीं किंचित । बभ्रु=(सं०) मूसा ।

सत्यही है सूर तू नहिं भगत देखत मोहिं।
सुनत बानी सूर छाँड़्यो बिसिख तीछन कोहि ॥ ८८ ॥
काटिकै धुज तबहिं बोल्यो साँचही हौं सूर।
सूरजा पै चोट कीन्ह्यो होइकै अति क्रूर ॥
कहत या बिधि बीर दोऊ चाप को संभारि।
तजन लागे तीर मानत नेक कोउ न हारि ॥ ८९ ॥

[विष्णुपद छंद]

भट बसुदेव द्रुपद नृप दोऊ जुद्ध करन लागे।
अति कठोर नाराच मारिकै दिसन भरन लागे ॥
तेखि तेखि आयुधन त्यागिकै पर-दल छाय दियो।
पृषत-पुत्र तब चाहि शत्रु दिसि कोप महान कियो ॥ ९० ॥
कह्यो सुनो बसु देव गरे में तृन मुख में राखौ।
नहिंतौ आजु आजि मैं तुमहूँ मृत्यु-स्वाद चाखौ ॥
कह बसुदेव अर्थ करिबे को नयो ढंग लायौ।
अरु निज नाम सार्थ करिबे हित सहज जतन पायौ॥९१॥
द्रुत पद सों द्रुत द्रवहु यहाँ से नाम साँच करिकै।
समर माँझ नतु द्रु-सम पदन कौं छिन्न करौं हठिकै ॥

---

८८ सूर=अंधा।

९० पृषत-पुत्र=राजा द्रुपद के पिता का नाम पृषत था।

८१ वसु=फाँसी, डोरी।

९२ द्रवहु=(सं० द्रु=भागना) भागो। द्रु=(सं०) वृक्ष।

उभै बीर इमि कहि रिस भरिकै जुद्ध भए करते ।
आयुध की बरसा करि करिकै दिसन भए भरते ॥९२॥

[चंचला छंद]

देवभाग सिंधु-भूप जंग मे तहाँ करत्त ।
काल व्याल से कराल शस्त्र से दिसा भरत्त ॥
कोपिकै तबै पुकारि सिंधुराज यों कहत्त ।
बीर ! देव-भाग होय मृत्यु-लोक क्यों रहत्त ॥ ९३ ॥
देव-लोक जोग है पठाइहौं भली बिधान ।
जुद्ध भूमि छाँड़िकै भजै जु त्रासकों न मान ॥
व्यंग बैन यों जबै सुन्यो महीप को कठोर ।
ज्वाब दीन भैमबीर कोपि चाहि तासु ओर ॥ ९४ ॥
अंध को दमाद होइ अंध बुद्धि होत जौन ।
अर्थ को अनर्थ कै बकत्त अंट संट तौन ॥
देव-तुल्य भाग होय देवभाग सो कहाय ।
यों बखानि दोउ भे लरत्त चाप कों बजाय ॥ ९५ ॥

[विशेषिकाछंद]

बीर विदूरथ देवस्त्रवा मिलि संगर मैं ।
कोपित ह्वै जमि जंग जुरे धनु लै कर मैं ॥
तामधि सायक जाल चहुँ दिसि छाय दियो ।
सम्मुख जादव जानहिं लाइ कह्यो तब यों ॥ ९६ ॥

---

९३ देव-भाग=देवताओं का अंश ।

राखि विदूरथ नाम भयो गिरि है जग में ।
लागत सायक व्है जड़ तू गिरिहै जँग में ॥
यों सुनि कोपि कह्यो भट ठीकहि बैन अहै ।
हौं गिरि देवस्रवा-बल टूटत जा पर है ॥ ९७ ॥
तू समझे बिनु व्यर्थ कहा यह बैन कहा ।
लागत सायक-वायु उड़ै गर ठाढ़ रहा ॥
यों कहि ते दोउ क्रोधित ह्वै धनु हाथ लियो ।
तीरन कों बरसाय उभै दल छोपि दियो ॥ ९८ ॥

[मौक्तिकदाम छंद]

भिरे तहँ आनक पौरव बीर । सुधारि सरासन सायक धीर ॥
कियो बरसात मनों झरि लाय । चहूँ दिसि लीन अकासहिं छाय॥९९॥
तबै जदुबीरहिं देखि समीप । कह्यो अति तेखि तहाँ पुरु-दीप ॥
नहीं बरसै गरजै अति जौन । अहै तव नाम यथारथ तौन ॥१००॥
सुने अस बैन तरेरत नैन । कह्यो बलऐन हतौ तव सैन ।
कछू नहिं बुद्धि अजान महान । फिरै मम आन समग्र जहान ॥१०१॥
न जानत तू पुरुलोक पठाय । करौं तव नाम सुपौरव-राय ॥
बखानि उभै भट या बिधि बात । लगे करने तब आयुध घात॥१०२॥

---

९७ विदूरथ=(सं० विदूर) एक पर्वत का नाम+(सं० थ) पर्वत । देव-स्रवा=(सं० देव) बादल+(सं० स्रवस्) टपका हुआ अर्थात् जल ।

१०० आनक=गरजने वाला बादल ।

१०२ पुरु-लोक=देव-लोक ।

[नरेस छंद]

रन श्यामक सोमक सों भिरे । सर मारि चहुं दिसि कों भरे ॥
निज सैन हताहत देखिकै । तब स्यामक ने अति तेखिकै ॥१०३॥
कह जादव सों अति मूढ़ हो । तुम उत्तर से निकेर अहो ॥
अब उत्तर पंथहि जायहो । अरु आप कियो फल पायहो ॥१०४॥
सुनि भैम कह्यो रिसि सों मढ़ो । तुम दच्छिन कों मुख कै बढ़ो ॥
जमलोक तुम्हैं पहुचायहौं । सर मारि अबै रन डारिहौं ॥१०५॥
सुनि बैनन नैन तरेरिकै । धनु औ सर लै कर फेरिकै ॥
दोउ बीर भिरे ललकारिकै । रन एकन एक प्रचारिकै ॥१०६॥

[मल्लिका छंद]

बेनुदारि औ समीक । छाँड़ि छाँड़िकै अनीक ॥
जुद्ध भे करत्त कोपि । त्यागि तीर बीर चोपि ॥ १०७ ॥
भैम भट्ट सों रिसाय । बैन यों कह्यो सुनाय ॥
है समीक तोहिं तोरि । डारि देहुँ भूमि खोरि ॥ १०८ ॥
सो सुने समीक धीर । कोपि ज्वाब दीन बीर ॥
नाम तोर बेनु दारि । जुद्ध बीच तोहिं फारि ॥ १०९ ॥
सार्थ नाम जो करौं न । त्यागि देउँ नाम तौन ॥
यों कहत्त भे लरत्त । साँग तीर कों तजत्त ॥ ११० ॥

---

१०४ उत्तर पंथ=(सं० उत्तरपथ) जीवात्मा के ब्रह्मलोक जाने का मार्ग ।

१०८ समीक=बरछी, युद्ध ।

[हरिपद छंद]

सृंजय सूर सुधारि सरासन भिरचो पांड्य नृप संग।
तीरन मारि कियो सर-पंजर भए देखि सब दंग ॥
पांड्य बीर बरिबंड काटि सर कोपि कह्यो अस बैन।
साँचहुँ सूरकुमार अहै तू सूझत कछू न नैन ॥ १११ ॥
मम भुजदंड जुगल जमदंडहिं अरु कोदंड प्रचंड।
लखिकै त्रास हिए नहिं लावत देहुँ अबै तोहिं दंड ॥
सुनिकै जादव बीर कह्यो तब हिए होइ अति क्रुद्ध।
सूर-सुवन हौं पंड-पूत तू कहा करैगो जुद्ध ॥११२॥
दाच्छिन कौं तू अहै निवासी आयौ उत्तर द्वार।
भेजौं अबै सूर-सुत-लोकहिं बैतरनी वा पार ॥
क्रुद्ध होइ अरु बोलि याहि बिधि संधान्यो धनु तीर।
प्रतिपच्छी पर-दल पै त्यागत लरन लगे दुहुँ बीर ॥११३॥

[चौपाई]

कंक बंक बढ़ि धनु टंकारचो। खैंचि कान लौं सायक मारयो ॥
बीर पंचनद नृप ललकारयो। काटि ताहि तिन महि महँ डार्यो ११४
डाँटि कह्यो तू कंक कहावै। नोचि खसोटि माँस कों खावै ॥
बीर बेस कत तू यह साजै। लरत भटन सों कछू न लाजै॥११५॥

---

१११ सुर-कुमार=अंधे का पुत्र।

११२ सूर=वीर। पंड=नपुंसक, कादर।

११३ सूर-सुत=यम।

११५ कंक=एक मांसाहारी पक्षी, यम।

सुनि जादव हँसि कै तब बोल्यो। अर्थ करन हित कोप टटोल्यो।
अहौं कंक तव असुहि निकारन। आयो इत कत चाहत भाजन ११६
अबै तोहिं निज लोक पठावौं। हतौं जुद्ध महँ बेर न लावौं॥
यों कहिकै दूनहुँ धनुधारी। तजन लगे सायक अतिकारी॥११७॥

[गुरु तोमर]

बृक औ कुसांब प्रचारिकै। भिरते भए सर छाँड़िकै॥
तब यों कुसांब पुकारिकै। कहतो भयो ललकारिकै॥११८॥
कत सिंह सों बृक तू लरै। मुख काल के अब क्यों परै॥
सुनि कोपि कै बृक यों कह्यो। कुस है तबै यों बकि रह्यो ११९॥
इमि दोउ बीर सुनाइकै। पर सैन पै झरि लाइकै॥
जम-भौन कों पठवाइकै। लरते भए खुनसाइकै॥१२०॥

[दोहा]

इहि बिधि उत्तर द्वार पै भयो कठिन संग्राम।
बरनि सकै सब कौन अस है कवि जग मति-धाम॥

उत्तर द्वार युद्ध वर्णनो नाम एकादशः सर्गः।

---

११९ बृक=भेड़िया। कुस=पागल।

संपादक द्वारा संपादित, अनूदित तथा संकलित अन्य पुस्तकें—

खुसरो की हिंदी कविता—इसमें खुसरो की समग्र मुकरियाँ, बुझौअल आदि संगृहीत हैं। प्रकाशक नागरी प्रचारिणी सभा, काशी। मू० ॥)

प्रेमसागर—लल्लूलाल कृत। सन् १८१० और सन् १८४० की प्रकाशित प्रतियों से मिलान कर पाठ शुद्ध किया गया है। भूमिका में हिंदी-गद्य-साहित्य का विकास भी विवेचनापूर्ण दिया गया है। प्रकाशक नागरी प्रचारिणी सभा, काशी। मू० २)

तुलसी ग्रंथावली—तीन भाग-इसके अन्य दो संपादक पं० रामचन्द्र शुक्ल और लाला भगवान दीन हैं। इसका पाठ अत्यंत शुद्ध तथा क्षेपक रहित है। पहिले में रामचरित मानस, दूसरे में गोस्वामीजी के अन्य ग्यारह ग्रंथ और तीसरे में जीवनी, लेख और कविताएँ हैं। प्रकाशक नागरी प्रचारिणी सभा, काशी। मू० ६)

रहिमन विलास—रहीम की कविता का सब से बड़ा संग्रह है और अंत में टिप्पणी दी गई है। प्रकाशक साहित्य सेवा सदन, काशी। मू० ।=)

भ्रमर गीत—नंददासजी कृत। पाद-टिप्पणी-युक्त है। प्रकाशक साहित्य सेवा सदन, काशी। मू० ≡)

हुमायूँ नामा—बादशाह हुमायूँ की सगी बहिन द्वारा लिखे गए फारसी के हुमायूँ नामा का अविकल अनुवाद है। मुगल-हरम के भीतरी दृश्यों का अपूर्व वर्णन है। प्रकाशक नागरी प्रचारिणी सभा, काशी। मू० १॥)

सुजान चरित्र—सूदन कवि कृत । इसकी भूमिका में राजा सूरजमल तक का भरतपुर का इतिहास फारसी इतिहासों से बहुत खोजकर दिया गया है । प्रकाशक नागरी प्रचारिणी सभा, काशी । मू० २)

संक्षिप्त रामस्वयंवर—महाराज रघुराज सिंह कृत रामस्वयंवर का संक्षिप्त संस्करण है । प्रकाशक नागरी प्रचारिणी सभा, काशी । मू० १)

भाषा भूषण—जोधपुर-नरेश महाराज यशवंत सिंह कृत । कई प्रतियों से पाठ शुद्ध कर तथा अंत में टिप्पणी देकर इसकी उपादेयता बढ़ा दी गई है । ग्रंथकार की जीवनी तथा चित्र भी दिया गया है । प्रकाशक पाठक एंड सन्स, राजादरवाजा, काशी । मू० ॥।)

मुद्राराक्षस—भारतेंदु हरिश्चन्द्र कृत । संस्कृत से पाठ मिलान किया गया है । अंतमें विस्तृत टिप्पणी दी गई है । लगभग अस्सी पृष्ठ की भूमिका में संस्कृत मुद्राराक्षस के समय की ऐतिहासिक विवेचना, मूलग्रंथकार तथा अनुवादक की जीवनी, नाटक के लक्षण आदि दिए गए हैं । प्रकाशक साहित्य सेवा सदन, काशी । मू० १)

कार्यालय-द्वारा प्रकाशित होनेवाली

अन्य पुस्तकें

१—निमाई-सन्यास नाटक-स्वर्गीय श्री शिशिर कुमार घोष की भक्ति-पूर्ण रचना का यह अत्यन्त सरल अनुवाद है।

२—काव्यादर्श (दंडी कृत)-मूल तथा हिंदी अनुवाद। भूमिका में संस्कृत लक्षण ग्रंथोंका इतिहास, रीति दोषादि की विवेचना आदि भी की जायगी।

३—इंशा, उनका काव्य तथा रानी केतकी की कहानी—संसार के उतार चढ़ावका पूरा दिग्दर्शन इंशाअल्लाह खाँ की जीवनी से हो जाता है। इनका स्थान हिंदी-साहित्य में लल्लूलालजी के समकक्ष है। रानी केतकी की कहानी का पाठ कई प्राचीन प्रतियों से मिलान कर शुद्ध किया गया है।

४—मआसिरुल् उमरा—यह ग्रंथ नवाब शाहनवाज़ खाँ समसामुद्दौला कीकृति है जिसमें मुग़ल दरबार के सात सौ तीस उमरा की जीवनियाँ दी गई हैं। यह फारसी भाषा में ढाई सहस्र पृष्ठों का विशद ग्रंथ है। इस ग्रंथ से केवल हिंदू राजाओं तथा सर्दारों के चरित्रों का अनुवाद कियो गया है। यद्यपि ये चरित्र कहने को एक्कानवे ही हैं पर वास्तव में लगभग तीन सौ राजाओं की जीवनियाँ सम्मिलित हैं। राजपुताने तथा बुंदेलखंड के कई राजवंशों का इतिहास एक एक चरित्रों में आगया है। इस ग्रंथ के आधार फारसी के इतिहास थे जिनमें कितने अब अलभ्य हैं। चित्र भी दिए जायँगे।

५—बुंदेलखंड का इतिहास-यह बुंदेलखंड का विस्तृत इतिहास बड़ी खोज से लिखा जारहा है। इसका कुछ अंश नागरीप्रचारिणी पत्रिका के भाग ३ अंक ४ में निकल चुका है।

कमलमणि-ग्रंथमाला-कार्यालय, बुलानाला काशी

के नियम—

१—इस कार्यालय द्वारा प्रकाशित सभी ग्रंथों के लेनेवाले स्थायी ग्राहक समझे जायँगे।

२—किसी प्रकार का शुल्क स्थायी ग्राहकों से नहीं लिया जाता। केवल स्थायी ग्राहकों की सूची में नाम तथा पता लिखवा देना चाहिए।

१—स्थायी ग्राहकों को २०) रु० सैकड़े कमीशन काट दिया जायगा। डाक व्यय अलग देना होगा।

४—पुस्तकों के प्रकाशित होतेही ग्राहकों के पास सूचना भेजने के दो सप्ताह के अनंतर पुस्तक वी० पी० से भेजी जायगी। जिस सज्जन को न लेना हो वे तुरंत सूचना देकर अनुगृहीत करेंगे।

५—वर्ष में चार रुपए मूल्य की पुस्तकें निकालने का प्रयत्न किया जायगा।

६—इस माला में साहित्य, इतिहास आदि के उच्चकोटि के ग्रंथ ही निकालने का यथासाध्य प्रयत्न किया जायगा।